गुरु-प्रसाद

जनवरी 2015
मूल्य ₹ 10

मासिक पत्रिका, गीता आश्रम, दिल्ली कैन्ट
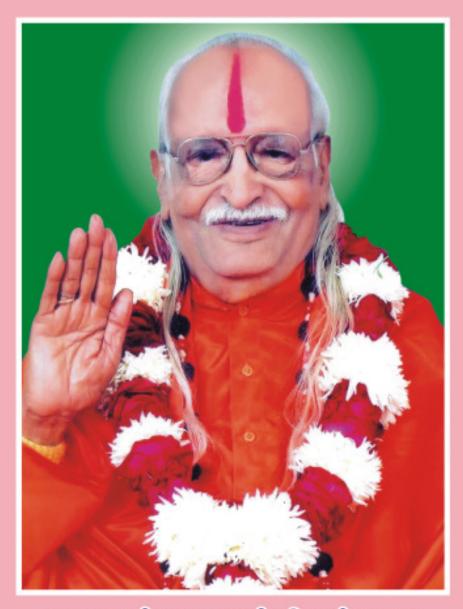
परम पूज्य श्री १००८ स्वामी हरिहर जी महाराज

वर्ष 55 गुरु प्रसाद - जनवरी 2015 अंक 01

भक्ति की शक्ति

भक्ति में बहुत शक्ति होती है। भक्ति का तात्पर्य है- स्वयं के अंतस को ईश्वर के साथ जोड़ देना। जुड़ने की प्रवृत्ति ही भक्ति है। दुनियादारी के रिश्तों में जुट जाना भक्ति नहीं है। भक्ति का मतलब है पूर्ण समर्पण। सरल शब्दों में हम कहते हैं कि हमारी आत्मा परमात्मा की डोर से बंध गई। ईश्वर के प्रति निष्ठापूर्वक समर्पित होने वाला सच्चा साधक ही भक्त है। जिसके विचारों में शुचिता (पवित्रता) हो, जो अहंकार से दूर हो, जो किसी वर्ग-विशेष में न बंधा हो, जो सबके प्रति सम भाव वाला हो, सदा सेवा भाव मन में रखता हो, ऐसे व्यक्ति विशेष को हम भक्त का दर्जा दे सकते हैं। नर सेवा में नारायण सेवा की अनुभूति होने लगे, ऐसी अनुभूति ही सच्ची भक्ति कहलाती है। भक्त के लिए समस्त सृष्टि प्रभुमय होती है। गीता में भगवान श्रीकृष्ण कहते हैं- जो पुरुष आकांक्षा से रहित, पवित्र, दक्ष और पक्षपात रहित है, वह सुखों का त्यागी मेरा भक्त मुझे प्रिय है, परंतु अफसोस यह कि इस दौड़ती-भागती और तनावभरी जिंदगी में हम कई बार प्रार्थना में भगवान से भगवान को नहीं मांगते, बल्कि भोग-विलास के कुछ संसाधनों से ही तृप्त हो जाते हैं। जब व्यक्ति दुनियादारी से दूर हटकर अपनी महत्वाकांक्षाओं को नियंत्रित करता है, तभी उसकी चेतना झंकृत होती है और परमात्म चिंतन में ईश्वरीय भक्ति साकार होने लगती है। भक्ति थी मीरा की, भक्ति थी चैतन्य महाप्रभु की, बुद्ध की, नानक की और महावीर की। जब सब लोग रात में सो जाएं और उस समय भी जिसके मन में परमपिता को पाने की हुंकार उठे, तो समझें वही सच्चा भक्त है। भक्त सही मायने में सुख और आनंद का पर्याय है। जब आपकी कामना या प्रार्थना राममय हो जाए, तो समझें कि यही भक्ति है। भक्त ही एकमात्र ऐसा है जो हृदय से यदि भगवान को याद करे तो परमपिता भी स्वयं को उसके अधीन कर देते हैं। इसलिए कहा भी गया है कि सच्ची भक्ति से भगवान भी भक्त के वश में हो जाते हैं। भक्तिभाव का आधार प्रेम, श्रद्धा और समर्पण है। भगवान राम ने शबरी के झूठे बेर भी प्रेम और भक्तिभाव के कारण खाए थे। मन में भक्ति भाव के उठने के बाद भक्त के व्यक्तित्व के नकारात्मक गुण दूर हो जाते हैं और उसके व्यक्तित्व का उन्नयन होने लगता है। भक्त अहंकार से मुक्त होकर अपनी अंतस चेतना में ईश्वर की अनुभूति करने लगता है।

– स्वामी हरिहर जी महाराज

गुरु-प्रसाद

(मासिक पत्रिका)

वर्ष : 55 ◆ अंक : 01 ◆ जनवरी 2015

संस्थापक :

श्री 1008 स्वामी हरिहर जी महाराज

●

संरक्षक :

स्वामी ब्रह्मानन्द जी

सर्वोच्च आध्यात्मिक प्रमुख

गीता आश्रम, दिल्ली कैन्ट, दिल्ली-110010

दूरभाष : 25694380 फैक्स : 25693316

Website : www.geetaashram.net

E-mail Address :

guruji64@hotmail.com

geeta.ashrams@gmail.com

●

एक प्रति : 10.00 रुपये

आजीवन सदस्यता : 1500 रुपये

●

प्रधान सम्पादक :

पण्डित गौरीदत्त शर्मा (गीता रत्न)

●

सम्पादक मण्डल :

गुरु मां गीतेश्वरी (गीता भास्कर)

गीता मातेश्वरी (गीता भास्कर)

श्रीमती स्वर्ण अम्बो (गीता रत्न, पुवानश्री)

श्री गोपी कृष्ण वातल

कृष्णा (रेणु)

एक ही दृष्टि में

भक्ति में शक्ति	३
नव वर्ष २०१५ की मंगलकामनाएं	५
दिव्य प्रसाद	६
दिव्यं ददामि ते चक्षुः	९
श्रीमद्भगवद्गीता-माहात्म्य	१२
सम्पुट वल्ली पाठ	१५
कथयन्तश्च मां नित्यं	१६
मेरे प्यारे कान्हा	१८
गुरु बिना ज्ञान नहीं	२०
देवी भागवतः श्री जगदम्बिकायै नमः	२१
हृदयरोग : सुरक्षा व उपाय	२४
स्वधर्म और परधर्म	२५
शीलवान दानी तथा सदाचारी पुरुष ही स्वर्ग जाता है	२७
गीता के बिना गति नहीं	२८
प्रेममूर्ति श्री भरतलाल जी	२९
गीतान्तर्गत श्रीकृष्णोक्त गीता माहात्म्य	३१
ANNOUNCEMENT	३३
NOTICE	३४
आश्रम समाचार	३५
राशिफल	४०
व्रत एवं त्योहार सूची	४१

सम्पादक, मुद्रक, प्रकाशक **आचार्य गौरीदत्त शर्मा** द्वारा मैनेजमेंट कमेटी ऑफ गीता आश्रम, दिल्ली कैंट, नई दिल्ली-10, गीता आश्रम, सदर बाजार, दिल्ली कैंट, नई दिल्ली-10 के निमित्त गीता आश्रम प्रिन्टिंग प्रेस, गीता आश्रम, सदर बाजार, दिल्ली कैंट, नई दिल्ली-110010 से मुद्रित एवं प्रकाशित।

Posted at NEW DELHI PSO, New Delhi-110002 on 2nd/3rd of each month.

के समस्त पाठकों

गीता आश्रम व गीताधाम

के समस्त भक्तजनों को

नव वर्ष 2015

की

हार्दिक बधाई एवं शुभकामनाएं

नव वर्ष आपके जीवन में नव-उत्साह,
नित्य-नूतन प्रगति एवं समृद्धि लाने वाला हो
एवं इस वर्ष में श्री सद्‌गुरुदेव भगवान
के कोटि-कोटि आशीर्वादों की वर्षा
आप पर सदैव होती रहे।

ब्रह्मलीन स्वामी श्री 1008 हरिहर जी महाराज का

दिव्य प्रसाद

श्रीमद्भगवद्गीता के सप्तदश अध्याय के त्रयविंश श्लोक का अर्थ-निरूपण तथा व्याख्या

श्लोक

ॐ तत्सदिति निर्देशो ब्रह्मणस्त्रिविधाः स्मृतः।
ब्राह्मणास्तेन वेदाश्च यज्ञाश्च विहिताः पुराः॥

श्रीमद्भगवद्गीता-१७/२३

अन्वयार्थ-

ॐ = ॐ, तत् = तत्, सत् = सत्, इति = इन, विविधः = तीन प्रकार के नामों, ब्राह्मण (जिस) परमात्मा का, निर्देश = निर्देश (संकेत), स्मृता = किया गया है, तेन = उसी परमात्मा से, पुरा = सृष्टि के आदि में, वेदाः = वेदों, च = तथा, ब्राह्मणाः = ब्राह्मणों, च = और, यज्ञाः = यज्ञों की, विहिताः = रचना हुई है।

व्याख्या-

ॐ तत् सत्- इन तीन प्रकार के नामों से जिस परमात्मा का निर्देश किया गया है, उस परमात्मा से सृष्टि के आदि में वेदों तथा ब्राह्मणों और यज्ञों की रचना हुई है।

ॐ तत्सदिति निर्देशो ब्रह्मणस्त्रिविधः स्मृतः-

ॐ तत् सत्- इन तीन शब्दों से परमात्मा का निर्देशन किया गया है। नाम से नामी का बोध हो जाता है। इन तीन नामों का परिचय, व्याख्या, महिमा सद्ग्रन्थों में विस्तार से कही गयी है। उस परमात्मा ने सृष्टि के आरम्भ में वेदों, ब्राह्मणों यज्ञों की रचना की। इन तीनों में से वेद तो विधि बताने वाले हैं। उस विधि के अनुसार अनुष्ठान करने वाले ब्राह्मण हैं और विधि के अनुसार क्रिया करने के लिये यज्ञ हैं। अब इनमें यज्ञ, तप, दान आदि की क्रियाओं में कोई कमी रह जाये तो उसको दूर करने के लिये और सिद्धि के लिये परमात्मा का नाम लेना चाहिए। उससे सबकी पूर्ति हो जाती है।

वैसे भगवान् की प्रीति के लिये यज्ञ, दान, तप आदि जो कुछ भी सकाम भाव का त्याग कर किया जाता है और उनमें कभी कोई कमी रह जाती है तो कर्ता की निष्कामता और अपने प्रति प्रीति देखकर उनके नाम लेने मात्र से वे परमात्मा अंग-वैगुण्य की अपनी कृपा से पूर्ति कर देते हैं।

'महानिर्वाण' तन्त्र में आया है-

ॐ तत्सदिति मन्त्रेण यो यत्कर्म समाचरेत्।
गृहस्थो वाप्युदासीनस्तस्याभीष्टाय तत् भवेत्।।
जपो होमः प्रतिष्ठा च संस्काराद्यखिलाः क्रियाः।

ॐ तत्सन्मन्त्रनिष्पन्नाः सम्पूर्णाः स्युर्न संशयः।।

'ॐ तत् सत्'– इस मंत्र से गृहस्थ अथवा उदासीन (साधु) जो भी कर्म आरम्भ करता है, उसको इससे अभीष्ट फल की प्राप्ति होती है। जप, होम, प्रतिष्ठा, संस्कार आदि सम्पूर्ण क्रियायें 'ॐ तत् सत्'– इस मन्त्र से सफल हो जाती हैं। इसमें कोई संशय नहीं है।

भगवान के ॐ नाम की महिमा–

भगवान् श्रीकृष्ण कहते हैं– **'प्रणवः सर्ववेदेषु'** अर्थात् सम्पूर्ण वेदों में प्रणव जिसे ॐ कहा जाता है, वह मैं हूं– गीता-७/८। पतंजलि योगशास्त्र में कहा गया– **'तस्य वाचकः प्रणवः'**। उस परब्रह्म परमात्मा का वाचक प्रणव है।

महाप्रलय के पश्चात् सृष्टि की उत्पत्ति होने से पहले परब्रह्म परमात्मा के द्वारा ॐ की अनावृत ध्वनि गुंजित हुई जिससे सृष्टि लीला का विस्तार हुआ। प्रणव से ही त्रिपदा गायत्री और त्रिपदा गायत्री से वेदत्रयी प्रकट हुई है।

सन्तान का रूदन भी सर्वप्रथम ॐ ॐ ॐ के स्वर में ही निकलता है।

योगीजन योग साधना में अनाहत नाद के द्वारा अपने अंदर ही ॐ की गम्भीर ध्वनि का श्रवण करते हैं।

वेदों की ऋचाएं 'ॐ' से ही प्रारम्भ होती हैं।

गीता कहती है–

ओमित्येकाक्षरं ब्रह्म व्याहरन्मामनुस्मरन्।
यः प्रयाति त्यजन्देहं स याति परमां गतिम्।।
गीता-८/१३

जो साधक 'ॐ' इस एक अक्षर ब्रह्म का मानसिक उच्चारण और मेरा निर्गुण-निराकार स्वरूप का स्मरण करता हुआ शरीर को छोड़कर जाता है, वह परम गति को प्राप्त होता है।

श्री शुकदेव मुनि राजा परीक्षित से कहते हैं–

अन्तकाले तु पुरुष आगते गतसाध्वसः।
छिन्द्यादसङ्ग शस्त्रेण स्पृहां देहेन्तु यं च तम्।।
गृहात् प्रव्रजितो धीरः पुण्य तीर्थजलाप्लुतः।
शुचौ विविक्त आसीनो विधिवत्कल्पितासने।।
अभ्यासेन्मनसा शुद्धं त्रिवृद्ब्रह्माक्षरं परम्।
मनो यच्छेज्जितश्वासो ब्रह्मबीजमस्मिरन्।।

मृत्यु का समय आने पर मनुष्य घबराये नहीं। उसे चाहिए कि वह वैराग्य के शस्त्र से शरीर और उससे संबंध रखने वालों के प्रति ममता को काट डाले। धैर्य के साथ घर से निकलकर पवित्र तीर्थ के जल में स्नान करे और पवित्र तथा एकान्त स्थान में विधिपूर्वक आसन लगाकर बैठ जाये। तत्पश्चात् 'अ, उ, म्'– इन तीन मात्राओं से युक्त प्रणव का मन ही मन जप करे।

इस प्रकार मनुष्य 'ॐ' के जप से भगवान् के मंगलमय रूप में मन लगाकर परमगति को प्राप्त कर सकता है।

जात्कर्म संस्कार में स्वर्ण का अंश, घृत और उसकी दूनी मधु मिलाकर सन्तान की जिह्वा में सोने की सलाई से परमात्मा का आदि नाम 'ॐ' लिखने और थोड़ी सी स्वर्ण मिश्रित घृत के साथ मधु चटाने का भी विधान है। उत्पन्न होने क पश्चात यह संस्कार सन्तान को आध्यात्मिक शक्ति एवं शारीरिक स्वस्थता भी प्रदान करता है।

'ॐ' में तीन अक्षर हैं– अ, उ, म्। ये तीनों अक्षर ध्वनित करने पर आरोहण रूप में आगे बढ़ते हैं और अपने सम्पूर्ण रूप में यह 'ॐ' पद तुरीय अवस्था की प्राप्ति कराता है। मोक्ष चाहने वाले इन यज्ञ, दान, तप आदि कर्मों को फल की कामना के बिना भगवान के आनन्द की प्राप्ति के लक्ष्य में सम्पन्न करना है। वे अपने इन कर्मों की पवित्रता, निष्कामता, निरहंकारिता के द्वारा

सचिच्दानन्द भगवान् की ओर ही बढ़ते हैं।

ओम् 'श्रीगणेश' करने का 'पद' भी माना जाता है जो समस्त यज्ञ, दान, तप के आरम्भ में मंगलाचरण तथा अनुमति के रूप में उच्चारित किया जाता है। यह इस बात का स्मरण कराता है कि हमें अपने कर्म को भगवान् की ओर ले चलना है। इसी प्रकार इति + आम् = इत्योम कहकर कर्म का समापन भी किया जाता है। अर्थात् सम्पूर्ण कर्म परमात्मा में ही समाप्त हों।

'तत्' शब्द निर्गुण-निराकार ब्रह्म की निरपेक्ष सत्ता का द्योतक है। 'सत्' परम और विश्वमय सत्ता के मूलतत्त्व का द्योतक है। 'ओम्' सत् का अर्थ शुभ भी है और परमात्मा की सत्ता का भी बोध कराता है। ये दोनों बातें शुभ और भगवत्-सत्ता का तत्व, इन यज्ञ, दान, तप कर्मों के साथ अवश्य होने चाहिए।

सभी शुभ कर्म सत् हैं क्योंकि ये जीव को हमारी सर्वोपरि सत्ता के लिये तैयार करते हैं। यज्ञ, दान, तप में दृढ़ निष्ठा और भगवान् के लक्ष्य से किये गये समस्त कर्म सत् हैं, क्योंकि वे हमारी उच्चतम सत्ता परमात्मा की प्राप्ति में निमित्त बनते हैं।

श्रद्धा हमारी सत्ता का केन्द्रीय तत्व है। अतएव बिना श्रद्धा के की हुई वस्तु असत् हो जाती है। भगवान श्रीकृष्ण कहते हैं-

अश्रद्धया हुतं दत्तं तपस्तप्तं कृतं च यत्।
असदित्युच्यते पार्थ न च तत्प्रेत्य नो इह।।
श्रीमद्भगवद्गीता-१७/२८

हे अर्जुन! बिना श्रद्धा के किया हुआ हवन, दिया हुआ दान एवं तपा हुआ तप और जो कुछ भी किया हुआ शुभ कर्म- वह समस्त 'असत्'- इस प्रकार कहा जाता है, इसलिये वह न तो इस लोक में और न परलोक में ही लाभदायक है।

ॐ तत् सत्- यह सूत्र उन ब्रह्म की तीन प्रकार से की गयी परिभाषा है जिन्होंने सृष्टि के आदिकाल में ब्राह्मणों, वेदों, यज्ञों की रचना की थी और इसी सूत्र में उन्होंने सब कुछ कह दिया है।

अतएव समस्त शुभ कर्मों में ॐ तत् सत् का श्रद्धा के साथ प्रयोग होना चाहिए। अन्तरात्मा की श्रद्धा- कोरा बौद्धिक विश्वास नहीं बल्कि जानना, देखना, विश्वास करना तथा कम करना आदि जितना भी है वह सब श्रद्धा के कारण उस ओर मुड़ जायेगा जो उच्चतम, दिव्यतम, सत्यतम और शाश्वत है।

वेदों में ॐ तत् सत् परमात्मा के प्रधान नाम माने गये हैं। साथ ही यज्ञ, दान, तप आदि शुभ कर्मों से इन नामों का विशेष सम्बन्ध है। इसलिये यहां इन तीन नामों का ही वर्णन किया गया है।

परमात्मा से श्री ब्रह्मा जी की उत्पत्ति हुई और फिर उन प्रजापति से ब्राह्मण, वेद, यज्ञादि उत्पन्न हुए हैं। यहां 'ब्राह्मण' से ब्राह्मण आदि समस्त प्रजा का, 'वेद' से तात्पर्य है चारों वेदों का, 'यज्ञ' शब्द से यज्ञ, दान, तप आदि समस्त शास्त्र में वर्णित कर्तव्य कर्मों का तथा पुरा पद सृष्टि के आदि काल के लिये आया है।

यहां यह सब कहने का मतलब है कि परमात्मा से समस्त कर्ता, कर्म, विधि की उत्पत्ति हुई है। ऐसे सृष्टि के मूलाधार परमात्मा के वेद में तीन नाम ॐ तत् सत् कहे गये हैं। उन नामों के उच्चारण मात्र से सबके अंग वैगुण्य की पूर्ति हो जाती थी।

श्री सद्गुरुदेव भगवान् श्रीमद्भगवद्गीता के पाठ में प्रत्येक अध्याय की पुष्पिका के पश्चात् यह भी कहलाते थे-

हरिः ॐ तत्सत्, हरिः ॐ तत्सत्, हरिः ॐ तत्सत्

श्रीकृष्णार्पणमस्तु। शुभं भूयात्।

दिव्यं ददामि ते चक्षुः

(श्री सद्‌गुरुदेव भगवान के दिव्य प्रवचनों पर आधारित)

● गुरु मां गीतेश्वरी (गीता भास्कर)

न तु मां शक्यसे द्रष्टु मनेनैव स्वचक्षुषा।
दिव्यं ददामि ते चक्षुः पश्य मे योगमैश्वरम्।।
श्रीमद्भगवद्‌गीता-११/८

अर्थात् हे अर्जुन! मुझको तू इन प्राकृत नेत्रों द्वारा देखने में निःसंदेह समर्थ नहीं है, इसलिये मैं तुझे दिव्य अर्थात् अलौकिक चक्षुः देता हूं, इससे तू मेरी ईश्वरीय योग शक्ति को देख।

दसवें अध्याय में अर्जुन ने भगवान की दिव्य विभूतियों को सुना तो उसके मन में प्रबल इच्छा प्रकट हुई कि मैं भगवान का अलौकिक विराट रूप देखूं तो उसने भगवान से निवेदन किया कि हे प्रभु मैं आपके ज्ञान, ऐश्वर्य, शक्ति, बल, वीर्य और तेज से युक्त ईश्वरीय रूप को प्रत्यक्ष देखना चाहता हूं। हे प्रभु! यदि आप मुझे उस रूप को देखने योग्य समझते हैं तो हे योगेश्वर! उस अविनाशी स्वरूप का मुझे दर्शन कराइये। अर्जुन की विनीत प्रार्थना सुनकर भगवान् प्रेम में भर गये और पांच बार कहा पश्य पश्य अर्थात् अर्जुन देखो देखो परंतु अर्जुन के मुख पर तो कोई भाव आया ही नहीं। तब परम कृपालु भगवान बोले कि हे अर्जुन इन बाहरी आंखों से तुम मेरा यह अलौकिक रूप नहीं देख सकते इसलिये मैं तुझे दिव्य चक्षु प्रदान करता हूं अर्थात् तुझे अलौकिक चक्षु देता हूं क्योंकि अलौकिक रूप देखने के लिये अलौकिक चक्षु ही चाहिए जिनसे तू दिल खोलकर मेरे सारे रूपों के दर्शन कर सके।

भगवान ने अर्जुन को इस अध्याय में तीन मुख्य रूपों का दर्शन कराया। एक दर्शन विराट रूप का सहस्र मुखों वाला, सहस्र नेत्र, उदर, हाथ, मस्तक आदि दशों दिशाओं में भगवान की भिन्न भिन्न आकृतियां। एक तरफ से भगवान के मुखों से अनेक सर्प निकल रहे हैं और दूसरी तरफ उनके मुखों से अनेक रंगों की अग्नियां ज्वालाओं के रूप में निकल रही हैं। सारे वीर और योद्धा भगवान के मुखों में प्रवेश कर रहे हैं, जिन-जिन योद्धाओं से अर्जुन घबड़ा रहा था, भीष्म पितामह, गुरु द्रोणाचार्य, कर्ण, जयद्रथ आदि सभी भगवान के मुखों में जाकर चूर-चूर हो रहे हैं। यह सब देखकर अर्जुन घबड़ा गया और पूछा कि प्रभु आप बताओ तो सही कि आप कौन हो? भगवान ने कहा कि अर्जुन इस समय मैं यहां काल तो क्या विकराल काल रूप बनकर प्रकट हुआ हूं, किसी को भी नहीं छोड़ूंगा और कोई नहीं बचेगा। भगवान ने कहा अर्जुन तुम जिन जिन से घबड़ा रहे हो वो तो पहले ही मुझ से मारे गये हैं, मरे हुओं को मारो अर्जुन उठो, युद्ध करो और यश की प्राप्ति करो।

अर्जुन ने भगवान के विराट रूप में विभिन्न अंगों के द्वारा अनेक अद्‌भुत दर्शन किये, जैसे कि- भगवान् के तलवे पाताल है, एड़ियां और पंजे रसातल है, पैर के पिंडे तलातल, दोनों घुटने सुतल, जांघें वितल और अतल, पेडू भूतल और नाभी रूप सरोवर को आकाश कहते हैं। छाती स्वर्गलोक, गला महालोक, मुख जनलोक, ललाट तपोलोक, मस्तक सत्यलोक, इन्द्रादि देवता भुजाएं हैं, दिशाएं कान हैं, शब्द श्रवण इन्द्रिय है। दोनों नासिका के छिद्र अश्विनी कुमार हैं। गन्ध घ्राण इन्द्रिय है। आग उनका मुख है, नेत्र अन्तरिक्ष हैं

और देखने की शक्ति सूर्य है। पलकें रात और दिन हैं। भ्रूविलास ब्रह्मलोक है। तालु जल और जिव्हा रस है। वेद ब्रह्म रंध्र है। सब प्रकार के स्नेह उनके दांत हैं और उनकी मोहिनी मुस्कान उनकी माया है। लज्जा ऊपर का होंठ और लोभ नीचे का होंठ है। धर्म स्तन हैं और अधर्म पीठ है। समुद्र कोख है पर्वत हड्डियां हैं। नाड़ियां नदी हैं और वृक्ष रोम हैं। वायु स्वांस है और काल उनकी चाल है। गुणों का चक्कर चलाते रहना उनका कर्म है। बादल केश हैं और सन्ध्या वस्त्र हैं। मूल प्रकृति उनका हृदय है और चन्द्रमा मन है। महातत्व उनका चित्त है। रूद्र अहंकार है। स्वायम्भु मनु उनकी बुद्धि और मनु की संतान मनुष्य उनके निवास स्थान हैं।

ऐसा अलौकिक रूप अर्जुन ने देखा, जिसके पश्चात् अर्जुन की प्रार्थना पर भगवान ने अर्जुन को चार भुजा वाला विष्णु रूप दिखाया और दुबारा फिर निवेदन करने पर दो भुजा वाला मधुर मुरली धारण किये कृष्ण रूप दिखाया। यह भगवान के दिव्य चक्षुओं का प्रताप था।

पांच प्रकार के चक्षु मुख्य रूप से माने गये हैं–

१. चर्म चक्षु : जिनसे हम भगवान के साकार रूप संसार को देखते रहते हैं। यहां से बैठे इतनी दूर स्थित सूर्य, चन्द्र, तारागण, ग्रह, नक्षत्र आदि देखते हैं। संसार की अनेक वस्तुएं देखते हैं।

२. दिव्य चक्षु : जो भगवान ने अर्जुन को प्रदान किये जिनसे उन्होंने भगवान का अद्भुत ईश्वरीय रूप देखा। इसी प्रकार से महर्षि वेद व्यास जी ने संजय को दिव्य चक्षु दिये। वास्तव में व्यास जी ने पहले धृतराष्ट्र को दिव्य ज्योति देने को कहा जिससे वे सारा कुरुक्षेत्र का युद्ध अपने महल में बैठे हुए देख सकते, परंतु धृतराष्ट्र ने इंकार किया और कहा कि मैं अपने ही कुल का नाश अपनी आंखों से नहीं देखना चाहता हूं। आप ये दिव्य चक्षु मेरे मंत्री संजय को दे दो, वो मुझे सारा युद्ध का हाल बता देगा। इस प्रकार से व्यास जी ने संजय को दिव्य चक्षु दिये।

ऐसे ही दिव्य चक्षु भगवान ने माता यशोदा को दिए, जब माता ने बाल कृष्ण से कहा कि मुंह खोलो, मैं देखूं तूने मिट्टी खायी कि नहीं? भगवान ने ज्यों ही मुंह खोला माता यशोदा ने कन्हैया के मुख में कई-कई ब्रह्माण्ड देखे, भगवान ने ज्यों ही वो दिव्य दृष्टि हटाई माता ने कन्हैया को मेरे लाल कहकर गले लगाया।

अक्रूर जब भगवान को मथुरा ले जा रहे थे, रास्ते में वे नदी में नहाने गये, जहां उन्होंने जल के अंदर भगवान के चतुर्भुज रूप का दर्शन किया। जल के अंदर भगवान को देखा फिर बाहर रथ पर बैठे भगवान को देखा। दर्शन पाकर वो गदगद हो गया, परंतु वो दिव्य दृष्टि भी थोड़े समय के लिये थी।

तीसरे स्थान पर आते हैं **'मनस्चक्षु'** अर्थात् **मानसिक दृष्टि**। मन की आंखों से मनुष्य कहां का कहां पहुंच जाता है। बैठे होते हैं सत्संग में, पर मन भाग जाता है कभी घर में, कभी बच्चों के पास, कभी खाने में, पीने में। नींद में भी सपनों में मन की आंखों से हम क्या-क्या देखते हैं। कभी बचपन की यादों में, कभी मंदिरों में, पहाड़ों, नदियों में और कभी-कभी स्वभाग्य से भगवान के, देवी-देवताओं के भी दर्शन करते हैं। इसी प्रकार एक बार राजा जनक ने एक स्वप्न देखा, सपने में किसी देश के राजा ने उनके ऊपर आक्रमण किया, राजा जनक को उसने परास्त कर दिया। राजा जनक को मिथिला पुरी छोड़ जंगल जाना पड़ा। जंगल में चलते-चलते वे थक गये। भूख और प्यास के मारे वे बेहाल हो गये। न खाने को भोजन न पीने को पानी। अचानक उनकी नजर दूर एक मंदिर पर पड़ी।

उनके मन में आशा की किरण जागी कि मंदिर में जरूर कुछ न कुछ खाने को मिलेगा। आगे जाकर देखा तो वहां भंडारा चल रहा था। राजा जनक ने आगे आकर पुजारी जी से प्रसाद मांगा। पुजारी ने कहा कि भंडारा तो समाप्त हो गया बस थोड़ी सी जली चावलों की खुरचन बची है। राजा जनक ने दोनों हाथ फैलाते हुए कहा कि वो ही दे दो। उसने एक पत्ते पर रखकर खुरचन राजा जनक को दे दी। ज्यों ही उन्होंने वो खुरचन खाने को हाथ बढ़ाया ऊपर से चील ने उड़कर ऐसा झपटा मारा कि सारी खुरचन नीचे गिरकर मिट्टी में मिल गई। तब राजा जनक के मुख से जोरदार चीख निकल गई और उनकी नींद टूट गई।

नींद खुली तो वो बहुत ही घबड़ाए हुए थे, मगर न मंदिर था, न पुजारी और न खुरचन, वे तो अपने महल में मखमली गद्दे पर सोये थे। एक आवाज देते तो कई कई नौकर उनकी सेवा में हाजिर हो जाते। मगर मन उस सपने को याद करके बड़ा परेशान था। उसी समय वे अपने गुरुवर अष्टावक्र के पास आये और उनको पूरा स्वप्न सुनाया और पूछा कि गुरुदेव वो सच था या यह सच है। गुरुदेव ने कहा कि 'न तो वो सच था और न यह सच है।' न सपना सच था न ये तुम्हारा महल सच है। ये मन के नजारे भी स्थायी नहीं होते।

चौथे हैं **ज्ञान चक्षु**। जिसके लिये भगवान ने १५वें अध्याय के १०वें श्लोक में कहा–

उत्क्रामन्तं स्थित वापि भुञ्जानं वा गुणान्वितम्।
विमूढा नानुपश्यन्ति पश्यन्ति ज्ञानचक्षुषः।।
(गीता–१५/१०)

अर्थात् शरीर को छोड़कर जाते हुए को अथवा शरीर में स्थित हुए को अथवा विषयों को भोगते हुए को इस प्रकार तीनों गुणों से युक्त हुए को भी अज्ञानी जन नहीं जानते, केवल ज्ञान रूप नेत्रों वाले विवेकशील ज्ञानी ही तत्व से जानते हैं।

बड़े भाग्यशाली महात्मा जन इन ज्ञान नेत्रों से सबमें उस परमात्मा के दर्शन करते हैं। वे ज्ञानी जन विद्या और विनय युक्त ब्राह्मण में तथा गौ में, हाथी, कुत्ते और चाण्डाल में भी उस परम तत्व आत्मा का दर्शन करते हैं और सबको एक भगवान का रूप मानते हैं।

जैसे संत एकनाथ कुत्ते के पीछे घी लेकर दौड़ रहे थे कि महाराज रूखी रोटी मत खाओ थोड़ा तो लगाने दो। ऐसे ज्ञानी जनों की प्रशंसा करते हुए भगवान ने छठे अध्याय में बताया–

यो मां पश्यति सर्वत्र सर्वं च मयि पश्यति।
तस्याहं न प्रणश्यामि स च मे न प्रणश्यति।।
(गीता–६/३०)

जो पुरुष सम्पूर्ण भूतों में सबके आत्मरूप मुझ वासुदेव को ही व्यापक देखता है और सम्पूर्ण भूतों को मुझ वासुदेव के अंतर्गत देखता है, उसके लिये मैं अदृश्य नहीं होता और वो मेरे लिये अदृश्य नहीं होता। मीरा ने सांप में और विष में अपने गिरधर गोपाल के दर्शन किये। उसका बाल भी बांका नहीं हुआ।

पांचवें चक्षु हैं- **कृपा चक्षु**, जिनको पाकर भक्त धन्य हो जाता है। गुरु अपने शिष्य के मस्तक पर हाथ रखकर उसे कृपा चक्षु प्रदान करता है, जिनसे वे अपने भगवान के दर्शन पाकर कृतकृत्य हो जाता है। यह शिष्य पर निर्भर करता है कि वह किस प्रकार साधना बढ़ाकर गुरु की अधिक से अधिक कृपा प्राप्त करता है।

नव वर्ष २०१५ की सबको हार्दिक बधाइयां एवं शुभकामनाएं। श्री सद्गुरुदेव भगवान के सबको करोड़ों आशीर्वाद प्राप्त हों। नया वर्ष सबके लिये मंगलमय हो।

(शुभम् भूयात्)

श्रीमद्भगवद्गीता-माहात्म्य

● श्रेयानन्द

मलनिर्मोचनं पुंसां जलस्नानं दिने दिने।
सकृद्गीताम्भसि स्नानं संसारमलनाशनम्।।
मल निःमोचनं पुंसां जल-स्नानं दिने दिने।
सकृत्-गीता-अम्भसि स्नानं संसार-मल-नाशनम्।।

अन्वयार्थ–

दिने दिने = प्रतिदिन, जलस्नानम् = जल स्नान करने से, पुंसां मल निर्मोचनम् = शारीरिक मैल का नाश हो जाता है। गीता अम्भसि = गीता जल में, स्नानम् = स्नान, सकृत् = सुकर्म करने से, संसार मल = भौतिक मानव कृत मैल (पाप) का, नाशनम् = सम्पूर्ण नाश हो जाता है।

दोहा-

शारीरिक मल जो कछु लागहिं।
जल स्नान किये से नाशहिं।।
सांसारिक मल पाप जो लागहिं।
गीता स्नान करत ही भागहिं।।

Whatever the dirt the body captures,
is washed away by bath in streem waters.
The sin mundane the life observes
by bath pious Geeta Complete disappears.

सामान्य अर्थ–

गीता माहात्म्य के तृतीय श्लोक में यह बताया गया है कि जल में प्रतिदिन स्नान करने से शारीरिक मैल नष्ट हो जाता है। जबकि गीता रूपी पवित्र ज्ञान गंगा में स्नान करने से डुबकी लगाने से शारीरिक, मानसिक, वाचिक सभी प्रकार के मानवकृत पापों का समूल नाश हो जाता है।

स्नान कई प्रकार के हैं। पंच भौतिक तत्त्वों से रचित शरीर अधम है। यह जड़ है। पंच तत्त्व भी जड़ हैं।

छिति जल पावक गगन समीरा।
पंच रचित यह अधम शरीरा।।
गगन समीर अनल जल धरनी।
इन्ह कइ नाथ सहज जड़ करनी।।
तव प्रेरित माया उपजाए।
सृष्टि हेतु सब ग्रंथनि गाये।।

पांच तत्त्वों में सबसे स्थूल पृथ्वी तत्त्व है, इसमे गंध, रस, रूप, स्पर्श और शब्द पांचों ही तन्मात्रायें हैं। यद्यपि मैल पृथ्वी तत्त्व से उत्पन्न होता है। तुलसीदास जी ने रामचरितमानस में लिखा है-

छूटइ मल कि मलहि के धोये।
घृत को पाव कोइ बारि बिलोये।।

मैल, मैल को धोने से नहीं छूटता। घी जल मथने से नहीं मिलता। तथापि मृतिका-स्नान का विधान है। उस मृतिका से स्नान किया जाता है, जो जल में डूबी हुई हो। चाहे नदी में डूबी हो या सरोवर में। फिर जल स्नान मुख्य है। क्योंकि पृथ्वी की उत्पत्ति जल से हुई है। अतः यहां उससे शूक्ष्म अग्नि स्नान, धूप स्नान, वायु स्नान की चर्चा नहीं हुई है। आकाश में मात्र शब्द गुण ही है। स्पर्श गुण नहीं। अतः आकाश स्नान असम्भव है। ये पंचतत्त्व माया से उत्पन्न हैं। माया= परा-अपरा, चैतन्य, जड़ अष्टधा- नवधा एक साथ है। परा प्रकृति पुरुष के सहचर्य से चैतन्य। अन्यथा व्यक्त प्रकृति (Manifestated) सब माया ही है।

गो गोचर लगि जहं मन जाई।
सो सब माया जानेहु भाई।।

अत: शारीरिक मल तो जलस्नान से दूर होता है। किंतु मानवकृत मैल (पापों) का नाश इस सबके रचयिता भगवान की वाणी रूपी रस स्पर्श से होता है। भगवान का एक नाम नारायण है। नार + अयन, अर्थात् नार (जल) में अयन बनाकर वास करने वाले नारायण हैं। भगवान जलशायिन: हैं। जल में शयन करने वाले हैं। रत्नाकर (समुद्र) आपका अयन है। पद्मा पत्नि हैं।

'रतनकरोषि सदनं गृहिणी च पद्मा।'

नार में अयन है। सभी आकाशादि (नार) तथा सभी नरों (प्राणियों) के अयन आप हैं। सभी के आप कर्ता, भर्ता, धारणकर्ता, परमगति, प्रभु साक्षी, निवासस्थान, शरणदाता, सुहृद, उत्पत्ति-प्रलय के हेतु, आधार निधान (लयस्थान) और अविनाशी कारण है।

गतिर्भर्ता प्रभु: साक्षी निवास: शरणं सुहृत्।
प्रभव: प्रलय: स्थानं निधानं बीजमव्ययम्।।
गीता-९/१८

नर आत्मा को कहते हैं। आत्मा से ही आकाशादि की उत्पत्ति हुयी है। यदि आत्मा न हो तो आकाशादि अस्तित्व विहीन है। आकाशादि का आत्मा को ज्ञान है। आत्मा का ज्ञान जड़ आकाशादि को नहीं है। उन नर और नारों को व्याप्त और व्यक्त किये हुए प्रभु नारायण हैं। वह सबके अयन हैं। और सर्वत्र सृष्टि उनका अयन है। अत: कार्य कारण दोनों ही है।

यच्च किञ्चिज्जगत्सर्वं दृश्यते श्रूयतेऽपि वा।
अन्तर्बहिश्च तत्सर्वं व्याप्य नारायण: स्थित:।।
(नारायणोपनिषद् १३/१)

अर्थात् जो कुछ भी जगत में दिखाई-सुनाई देता है, प्रतीत होता है उस सबको नारायण बाहर-भीतर से व्याप्त करके स्थित है।

नराज्जातानि तत्त्वानि नारायणीति ततो विदु:।
तान्येव चायनं तस्य तेन नारायण: स्मृत:।।
(महाभारत पुराण)

अर्थात् पंच तत्व नर से उत्पन्न, नार कहलाते हैं। वे ही भगवान के अयन थे। अत: भगवान नारायण कहलाते हैं।

'यत्प्रयन्त्यभिसंविशन्ति' (तै.उप. ३/१)

अर्थात् सर्व जीव जिसमें प्रविष्ट होते हैं। वे नारायण हैं।

'नाराणामपनं यस्मात्तस्मान्नारायण: स्मृत:'
आपो नारा इति प्रोक्ता आपो वै नरसूनव:।
ता यदस्यायनं पूर्वं तेन नारायण: स्मृत:।।
(मनुस्मृति १/१०)

अर्थात् अप् (जल) नार कहलाता है। वह नार ही परमात्मा-अयन है। अत: भगवान नारायण हैं।

'नारायणाय नम इत्ययमेव सत्य:।
संसारघोरविष संहरणाय मंत्र:।।

अर्थात् नारायणाय नम: यही सांसारिक सर्व घोर विष का नाशक है।

ॐ नारायणाय विधमहे वासुदेवाय धीमहि,
तन्नो विष्णु: प्रचोदयात्।।

तात्पर्य यह है कि सर्व जल में सर्वश्रेष्ठ गंगा जल है। वह भगवान के चरणों से निकली है। जबकि गीता भगवान नारायण के मुखारबिन्दु से प्रकट हुयी हैं। अत: जल से स्नान करने से मैल छूटता है जबकि गीता-ज्ञान-गंगा-स्नान से माया के त्रिदोष मल-विक्षेप तथा आवरण का नाश होता है।

सर्वशास्त्रमयीगीता सर्वदेवमयो हरि:।
सर्वतीर्थमयीगंगा सर्ववेदमयो मनु:।।

सर्वदेवमय हरि सर्व पाप, ताप, शोक संताप का हरण गीता ज्ञान से और सर्व मलों का हरण पवित्र जल स्नान द्वारा करते हैं।

गोस्वामी तुलसीदास जी ने रामचरित मानस के आरम्भ में ही संत समाज को सर्व सुलभ

आनन्द कल्याणमय तीर्थराज कहा है-

मुद मंगलमय संत समाजू।
जो जग जंगम तीरथ राजू।।
रामभक्ति जंह सुरसरि धारा।
सरसइ ब्रह्म विचार प्रचारा।।
बिधि निषेधमय कलिमल हरनी।
करम कथा रबि नंदनि बरनी।।
हरिहर कथा बिराजति बेनी।
सुनत सकल मुदमंगल देनी।।
बटु बिस्वास अचल निज धरमा।
तीरथ राज समाज सुकरमा।।

पिछले मंत्र में प्राणायाम परायणः पर चर्चा हुयी थी। बाईं ओर की इड़ा (चन्द्र स्वर) प्राणवायु शीतल गंगा रूपी भक्तिधारा है। दाहिनी ओर की पिंगला (सूर्य स्वर) यमुना रूपी कर्म की गहरी नदी है। दोनों का मिलन शुषुम्ना स्वर सरस्वती रूपी ज्ञान है। जो गुप्त है आन्तरिक है। ज्ञान साधन से प्रकट है। स्वधर्म में अटल विश्वास ही अक्षय वट है।

यज्ञ क्रिया से अर्थ, श्रद्धा क्रिया से धर्म, योग क्रिया से काम, ज्ञान क्रिया से मोक्ष की प्राप्ति होती है। अतः मोक्ष प्राप्ति हेतु गीता ज्ञान प्रधान है। और परम पुरुषार्थ भी मोक्ष ही है। तथा चारों अवस्थायें क्रमशः जाग्रत (विश्व) नेत्र में, स्वप्न (तैजल) कण्ठ में, सुषुप्ति (प्राज्ञ) हृदय में और तुरीय (ब्रह्म) ब्रह्मरन्ध्र में निहित की अनुभूति गीता ज्ञान से है। पांचवीं अवस्था तुरीयातीत अनिर्वचनीय है। अतः जब गीता ज्ञान की पराकाष्ठा में जीव स्थित हो गया तो जीवात्मा न होकर परमात्मा में समर्पित (भक्त) विसर्जित (ज्ञानी) परब्रह्म रूप हो गया।

जल स्नान करते समय यह भाव हो कि यह जल गंगा जल ही है जो भगवान के चरण नख से प्रवाहित है तो मैल के साथ-साथ मायाकृत-मल-विक्षेप-आवरण का भी नाश होगा। भगवद् कथा मन्दाकिनी नदी है। चित्त ही चित्रकूट है। स्नेह ही प्रभु की विहारस्थली है।

राम कथा मंदाकिनी चित्रकूट चित चारू।
तुलसी सुभग सनेह बन सिय रघुबीर बिहारू।।

किन्तु फल तो भावानुसार ही फलित होते हैं।

मंत्रे तीर्थे द्विजे देवे दैवज्ञे भेषजौ गुरोः।
यादृशी भावना यस्य सिद्धिर्भवति तादृशी।।

मंत्र में, तीर्थ में, विप्र में, देवता में, ज्योतिष में, औषधि में, गुरु में, जाकी जैसी भावना, तैसी ताकी सिद्धि। किन्तु

जौकरि कष्ट जाय पुनि कोई।
जातहिं नींद जुड़ाई होई।
जड़ता जाड़ विषम उर लागा।
गये न यज्जन पाव अभागा।।
जौ बहोरि को उपूछन आवा।
सर निन्दा करि ताहि सुनावा।।

अतः महत्वपूर्ण है गीता-गंगा में निष्ठा।

गीता गंगा च गायत्री सीता सत्या सरस्वती।
ब्रह्मविद्या ब्रह्मबल्ली त्रिसंध्या मुक्ति गेहिनी।।

भगवान ने गंगा जी को अपनी विभूति (गीता १०/३१) में बताया है-

पवनः पवतामस्मि रामः शस्त्रभृतामहम्।
झषाणां मकरश्चास्मि स्त्रोतसामस्मि जाह्नवी।।

श्रीमद्भागवतपुराण (११/१६/२०) में भी गंगा जी को नदियों व तीर्थों में अपनी विभूति बताया है।

तीर्थानां स्रोतसां गंगा समुद्रः सरसामहम्।
आयुधानां धनुरहं त्रिपुरघ्नां धनुष्मताम्।।

गीता में भगवान ने पवित्र कारकों में अपने को पवन बताया। शस्त्रधारियों में राम। रामावतार तीन हुए। अग्निवंश में परशुराम, सूर्यवंशमें श्रीराम, चन्द्रवंश में बलराम।

बन्दउं नाम राम रघुबर को।

हेतु कृसानु भानु हिमकर को।।

भागवत में धनुर्धरों में बताया कि वह त्रिपुरारि शंकर है। जबकि गीता (१०/२३) में 'रुद्राणां शंकरश्चास्मि' अपने को बताया। तात्पर्य यह है कि विष्णु के अवतार तीनों राम व शिव एक ही हैं। अभेद हैं। अतः गीता व गंगा कृष्ण विष्णु शिव वाणी व तीर्थ हैं।

जो भगवान निर्गुण व निराकार हैं वही सगुण शाकार निराकार हैं। भगवान के चरणों से निकली गंगा पवित्र हैं, तो भगवान के चरणों से निकला शूद्र भी पवित्र है। क्योंकि जो कोई भी भगवान की शरण आता है, परमगति पाता है।

मां हि पार्थ व्यपाश्रित्य येऽपि स्युः पापयोनयः।
स्त्रियो वैश्यास्तथा शूद्रास्तेऽपि यान्ति परां गतिम्।

(गीता-९/३२)

गुरुवाणी में भी शारीरिक मैल की अपेक्षा सांसारिक मल धोने पर जोर दिया गया है।

वैसाखि धीरनि किउ वाढीआ,
जिना प्रेम बिछोहु।
हरि साजन पुरूखु विसार कै
लगी माया धोहु।।
प्रीतम चरणी जो लगे तिन की निरमल सोइ।
नानक की प्रभ बेनती प्रभ मिलहु परापति होइ।।
माघि मजनु संगि साधुआ धूड़ीकरि इसनानु।
हरि का नाम धिआइ सुणि सभना नो करि दानु।।
जनम करम मलु उतरै मन ते जाइ गुमानु।
कामि करोधि न मोहिऐ बिनसे लोभु सुआनु।।
सचै मारगि चल दिया उसतति करै जहानु।
अठसठि तीरथ सगल पुंन जीअ दइआ परवानु।।
जिसनो देवै दइआ करि सोइ पुरूखु सुजानु।
जिना मिलिआ प्रभु आपणा नानक तिनु कुरबानु।।

●

सम्पुट वल्ली पाठ

देश-विदेश के समस्त गीता आश्रमों में सम्पुट वल्ली पाठान्तर्गत दिनांक ३१.१२. २०१४ को श्रीमद्भगवद्गीता के तीसरे अध्याय का अठारहवां मंत्र (३/१८) एवं १ जनवरी २०१५ को श्रीमद्भगवद्गीता के तीसरे अध्याय का उन्नीसवां मंत्र (३/१९) सम्पुट वल्ली मंत्र होगा।

नैव तस्य कृतेनार्थो नाकृतेनेह कश्चन।
न चास्य सर्वभूतेषु कश्चितदर्थव्यपाश्रयः।।

(श्रीमद्भगवद्गीत-३/१८)

तस्मादसक्तः सततं कार्यं कर्म समाचर।
असक्तो ह्याचरन्कर्म परमाप्नोति पूरुषः।।

(श्रीमद्भगवद्गीता-३/१९)

कथयन्तश्च मां नित्यं

● स्वामी मुक्तानंद

भगवान को भक्त अति प्रिय है। भक्त का अर्थ है– जो एक भी क्षण भगवान से विभक्त न हो। ऐसा प्रिय भक्त बनने के लिये भक्त को अधिक से अधिक एकान्त वास करना चाहिए। किसी के साथ अधिक बैठना नहीं चाहिए। और यदि किसी के साथ बैठना भी पड़ जाये तो फिर आपस में भगवान की लीलाओं व गुणों की ही चर्चा करें– जैसा भगवान ने स्वयं गीता में कहा है–

मच्चिता मद्‌गतप्राणा बोधयन्तः परस्परम्।
कथयन्तश्च मां नित्यं तुष्यन्ति च रमन्ति च।।
(गीता-१०/९)

ऐसा करने से भक्त का समय सार्थक होता है। पाप कर्म से वह बच जाता है। किसी की निन्दा-चुगली नहीं करता, किसी का मन नहीं दुःखाता, किसी को गाली नहीं देता, किसी पर क्रोध नहीं करता, केवल अपने ठाकुर जी की ही बातें करता है तो ऐसा भक्त ऊंचा उठ जाता है और भगवान का परम प्रिय बन जाता है– **'भक्ति मान्यः स मे प्रियः'** जो भक्त भगवान की चर्चा करते हैं, भगवान भी उन भक्तों की चर्चा करते हैं। नरसी जी के प्रति भगवान ने कहा था कि नरसी मुझे बेचे तो मैं बिक जाऊं और सदा उसकी चाकरी करूं।

अन्य किसी भी चीज में संतोष मान लो किंतु भगवान के भजन में कभी संतुष्ट मत होओ। भक्ति में जो संतोष मान लेता है, वह प्रभु के मार्ग में कभी आगे नहीं बढ़ सकता। भक्ति ऐसी करें कि भगवान हमारा स्मरण करें, भगवान को हमारी याद सताये। भगवान का भजन श्रद्धा और विश्वास के साथ करें। प्रभु भाव के भूखे हैं। जितना समय हम प्रभु-भजन में व्यतीत करते हैं वही सार्थक है, उतना ही हम जिये हैं। बाकी समय तो हमारा मरण ही हुआ। बिना सत्संग करे हम प्रभु के गुणों व लीलाओं को कैसे जान सकते हैं? संतों के मिलन में केवल परमात्मा की ही चर्चा होती है। परंतु कुछ लोग संत से मिलन होने पर भी अपनी लौकिक बातें करने लगते हैं। अतः उन्हें प्रभु-भक्ति की तत्वभरी बातें जानने से वंचित रहना पड़ता है। संतों से सदा प्रभु-प्राप्ति का मार्ग पूछें।

एक बार महात्मा विदुर जी भी वृंदावन में आकर ब्रज-रज का आनन्द लेते हैं। विदुर जी रमण-रेती की पवित्र रज में लोटने लगते हैं। रमण-रेती में गोपियों की भी चरण-रज है। यमुना किनारे बैठकर विदुर जी भगवान श्रीकृष्ण की मंगलमयी लीलाओं का चिंतन करते हैं। यमुना किनारे लौकिक बातें करना पाप है। यह भूमि अति पवित्र है। मेरे ठाकुर यहां गौयें चराने आते थे। विदुर जी यह सब मन ही मन चिंतन कर रहे हैं। कदम्ब के पेड़ पर बैठकर कन्हैया मुरली बजाते हैं, और अपनी गायों को बुलाते हैं कि हे गंगी! हे गोदावरी आओ। गायों के बीच खड़े गोपाल कृष्ण का ध्यान करते-करते विदुर जी के नेत्र भर आये और रोकर कहने लगे कि मेरे से तो ये पशु भी श्रेष्ठ हैं, जो परमात्मा से मिलने के लिये आतुर होकर दौड़ते हैं। गौएं भी कृष्ण-मिलन के लिए व्याकुल हैं। धिक्कार है मुझे कि अभी तक मुझ में कृष्ण-मिलन की तीव्र इच्छा उत्पन्न नहीं हुई है। गौएं दौड़ती हैं और मैं पत्थर-सा बैठा हुआ हूं। हे विधाता! मेरे मन में वैसी व्याकुलता क्यों नहीं आती? हे प्रभु। मैं भी इन गौओं की भांति आपसे मिलने के लिए

कब तड़पूंगा?

किसी भी तरह जगत को भूल जाओ और प्रभु-प्रेम में तन्मय हो जाओ- सभी साधनों का यही रहस्य है। विरह जब अतिशय तीव्र होता है, तभी परमात्मा से मिलन होता है।

अचानक, उद्धव जी जब प्रभु की आज्ञा पाकर बद्रिकाश्रम जा रहे थे तो मार्ग में यमुना जी व ब्रज भूमि के दर्शन करते हुए शोकाकुल विदुर जी को बैठे देखा। उद्धव जी ने सोचा कि लगता है कोई वैष्णव बैठा है और उसका हृदय कृष्ण-प्रेम से भरा हुआ है। समीप जाने पर पता लगा– यह तो प्रभु के परम भक्त महात्मा विदुर जी हैं तो उद्धव जी ने उन्हें वन्दन किया। उसी समय विदुर जी ने नेत्र खोले और रोकर कहा– हे उद्धव जी! यह ठीक नहीं है कि आप मुझे वन्दन करें। प्रणाम तो मुझे आपको करना चाहिए।

संतों का, भक्तों का मिलन भी कैसा मधुर होता है–

चार मिलें चौसठ खिले, बीस रहे कर जोड़।
हरिजन से हरिजन मिले, बिहंसे सात करोड़।।

अर्थात चार– चार आंखें, चौंसठ– चौंसठ दांत, बीस– हाथ पैर की उंगलियां, सात करोड़– सात कोटि रोम (शरीर में सात करोड़ रोम होते हैं।) और हरिजन का अर्थ है– हरि के लाड़ले प्रभु भक्त।

विदुर जी और उद्धव जी का दिव्य मिलन ही नहीं बल्कि दिव्य सत्संग हुआ। आज यमुना जी को आनन्द हो रहा है कि मेरे तट पर बैठकर आज ये भक्त मेरे प्रभु की लीला का वर्णन करेंगे। मेरे प्यारे श्रीकृष्ण की बातें करेंगे। मेरे श्यामसुंदर का गुणानुवाद करेंगे, लीलागान करेंगे और मैं अपने कृष्ण की लीलाओं का वर्णन सुनूंगी। यमुना जी शांत व गंभीर हो गयीं। सचमुच उन दोनों भक्तों ने भगवान की बाल-लीला से लेकर प्रौढ़-लीला आदि सारी लीलाओं का वर्णन संक्षेप में किया।

उद्धव जी ने बताया कि- प्रभु मुझे भक्ति-धर्म का उपदेश देकर अपने परम-धाम चले गये। यह सुनकर विदुर जी प्रेम में विभोर होकर रोने लगे। हा कृष्ण! हा कृष्ण! कहकर धरती पर गिर पड़े। उद्धव जी ने विदुर जी को सांत्वना दी और बताया हे महात्मन! आप बड़े भाग्यशाली हैं। भगवान ने आपको एक बार नहीं, दो बार नहीं बल्कि तीन बार याद किया था। उन्होंने यह भी कहा कि विदुर जी मेरे परम भक्त हैं। सभी को मैंने कुछ न कुछ दिया है, परंतु विदुर जी को मैं कुछ न दे सका। इसलिए उन्हें भी मेरा यह भक्ति-धर्म का उपदेश जरूर सुना देना।

इस बात को सुनकर तो विदुर जी की आंखों से अश्रुधारा बह निकली। प्रेम से विह्वल होकर वे रो पड़े। प्रभु ने परम धाम जाते-जाते भी मुझे दीन-हीन को याद किया- ऐसा सोच-सोचकर विदुर जी प्रेम में रोने लगते। यह मेरे प्रभु की मुझ पर कितनी अपार कृपा है। मैं पापी हूं, अधम हूं, किंतु परमात्मा ने मुझे अपनाया है।

यमुना मैया ने भी कृपा करके विदुर जी को भक्ति का दान दिया। यमुना जी ने नवधा भक्ति दी। ज्ञान और वैराग्य के बिना भक्ति दृढ़ भी नहीं होती और सफल भी नहीं होती। विदुर जी प्रभु-भक्ति को पाकर कृतकृत्य हुए।

इसलिए तो भगवान अर्जुन के माध्यम से हम सब को समझा रहे हैं कि यदि मेरे भक्त बनना चाहते हैं तो जब भी आपस में बैठें तो मेरी लीलाओं का गान करें–

'कथयन्तश्च मां नित्यं'

जैसे विदुर जी ने भगवान की लीलाओं का चिंतन करते हुए जीवन बिताया तो प्रभु भी उन्हें याद करते हुए परम-धाम की ओर गये। अतः गीता के इस दिव्य उपदेश को जीवन में धारण करेंगे तो प्रभु के परम प्रिय भक्त बन जायेंगे।

मेरे प्यारे कान्हा

● स्वामी गीता मातेश्वरी (गीता भास्कर)

प्यारे कान्हा! प्यारे कान्हा! कितना मधुर शब्द है, जिसको बोलने और सुनने से वाणी पवित्र होती है, हृदय गदगद होता है, मन प्रफुल्लित होता है तथा कान सुनकर धन्य होते हैं। इसी नाम के लिए तो भक्त मर मिटता है और इसी नाम के सहारे से तो भक्त भवसागर पार हो जाता है। इसी नाम को गोपियों ने जपा, मीरा ने जपा और विभोर हो गई। वे तो यही कहती थीं– 'हे प्यारे कन्हैया! बस तू ही तू है। तेरे लिए जो कुछ कहा जाये, वही थोड़ा है। तू दयामय है। तू अपने प्यारे भक्तों को नन्हें बच्चों की तरह समझकर, उनकी हरकतों पर कभी नाराज नहीं होता। बल्कि उन्हें स्नेहवश सदा प्यार करता है। बस इसी भरोसे आज हम भी मनमानी कर रही हैं। तेरे विरह में तड़पना भी हमें अच्छा लगता है। जितना हम विरह में तड़पती हैं, उतना ही तुम्हें अपने करीब पाती हैं।'

प्रभु विरह में तो वही तड़पेगा जिसे प्रभु से अनन्य प्रेम होगा। जिससे हमें प्रेम होता है, उसी के वियोग में ही जीव व्याकुल होता है। यदि भक्त भगवान के लिये व्याकुल होता है, रोता है, तड़पता है तो भगवान भी उस भक्त के लिए व्याकुल हो उठते हैं, रोते हैं और वैसे ही उस भक्त को पाने के लिये तड़पते भी हैं। क्योंकि भगवान ने गीता में स्पष्ट शब्दों में कहा है–

ये यथा मां प्रपद्यन्ते तांस्तथैव भजाम्यहम्।
(गीता-४/११)

प्यारे कान्हा का विरह भी एक योग है। बाकी जितने भी योग हैं जैसे– ज्ञानयोग, कर्मयोग, ध्यान, त्याग व संयासयोग आदि-आदि– इन सबमें जीव को अहंकार हो सकता है, परंतु विरह योग ही एक ऐसा योग है, जिससे अहंकार कोसों दूर रहता है। और जहां अहंकार नहीं है, वहीं वह प्यारा यार कन्हैया बसता है।

विरह-योग प्यारे कान्हा को पाने का सुगम मार्ग है। परन्तु यह विष की घूंट है, नीम का चबाना है। जैसे नीम चबाते समय अवश्य कड़वी लगती है, परंतु परिणाम में लाभदायक सिद्ध होती है। इसी प्रकार प्रभु-विरह में पहले तड़पना पड़ता है, पहले यह योग कड़वा लगता है, परंतु परिणाम में कन्हैया-मिलन का जो सुखद आनन्द प्राप्त होता है- अकथनीय है। विरह योग कुनैन का खाना है। नीम की भांति कुनैन की गोली पहले कड़वी होती है, परंतु परिणाम शुभ होता है। जिस-जिसने भी इस विरह रूपी कुनैन को खाया है, उसने तो प्यारे कन्हैया को पाया है। तब उन्होंने समझा कि यह विष कितना मधुर है।

यत्तदग्रे विषमिव परिणामेऽमृतोपमम्।
(गीता-१८/३७)

विरह एक जादू है। एक बार जिस पर सवार हो जाये, फिर वह अपने प्रीतम यानि प्रभु को प्राप्त किये बिना नहीं रह सकता। हर क्षण उसके नेत्र भरत जी की भांति सजल रहते हैं। भरत जी भी तो इसी विरह योग में तड़पते थे। जादू के साथ-साथ विरह एक नशा है, जो नेत्रों के द्वारा दूसरे के हृदय में प्रवेश कर जाता है। शराब का नशा तो कुछ देर के बाद समाप्त हो जाता है, परंतु यह विरह-योग का नशा तो तब तक समाप्त नहीं होता, जब तक भक्त और भगवान का साक्षात् मिलन न हो जाये।

संत कबीरदास जी कहते हैं–

आग जो लागी समुद्र में, धुआं न प्रकट

होय।

सो जाने जो जरमुआ, जाकी लाई होय।।

अर्थात् जब मन में प्रेम की आग लग जाती है, तो दूसरा उसे क्या जाने। या तो वह जानता है जिनके मन में आग लगी है, या आग लगाने वाला जानता है।

यह विरह-योग सभी के भाग्य में नहीं होता। यह तो परमात्मा की देन है, जो किसी विशेष कृपापात्र को ही प्राप्त होती है। वो प्यारे कन्हैया जिस पर विशेष प्रसन्न होते हैं, उसी को यह योग पुरस्कार के रूप में प्रदान करते हैं। इससे भी बढ़कर विरह एक अलौकिक जागीर है, जो किसी भाग्यवान के भाग्य में ही होती है। संसारिक सम्पत्ति नष्ट हो जाती है, यहीं छूट जाती है, साथ नहीं जाती, परंतु यह अलौकिक जागीर भक्त के पास भगवान की अमानत के रूप में सदा विद्यमान रहती है। यह विरह-योग रूपी कर्म कभी नष्ट नहीं होता बल्कि यह कर्म तो अपने प्यारे कन्हैया को भी ऋणी बना देता है। सच्चा विरही अपने प्यारे प्रीतम को पाकर उतना संतुष्ट नहीं होता, जितना उसके विरह में व्याकुल होता हुआ रो-रोकर संतुष्ट होता है। इसलिए तो कहा है–

जिस पर तुम हो रीझते, क्या देते जदुबीर।
रोना-धोना सिसकना, आहों की जागीर।।

उस रोने में जो आनन्द आता है, वह न तो ध्यान लगाने में आता है और न ही माला जपने में। विरह एक ऐसी जंजीर है, जो अपने प्रियतम के कण्ठ में पड़कर अपने हृदय की खूंटी से बंधी रहती है। यह जंजीर ज्यों-ज्यों खिंचती है, त्यों-त्यों ही एक अलौकिक वेदना की लहर उठती है।

मीरा गिरधर गोपाल का नाम लेने के लिये गि. ....र.... ही कह पाती थी कि पहले ही आंसू गिर पड़ते थे। पूरा नाम तो ले ही नहीं पाती थी। मानों गिरधर गोपाल ने स्वयं मुख बंद कर दिया हो। यह सब विरहदेव की करतूत है। जब विरह का पारा रोम-रोम में चला जाता है तो नेत्र अपने आप सजल हो उठते हैं और पलक झपकना तक भूल जाते हैं। तड़प-तड़प कर प्राण देना ही तो विरही का लक्ष्य होता है। उसे इस तड़प में ही मजा मिलता है। विरही तो इस विरह अग्नि में इतना जल जाता है कि उसे मौत भी नहीं ढूंढ़ पाती। विरह का अर्थ है–

'अपने प्रियतम के प्रेम पर मर मिटने की लगन'

अनेक भक्तों ने विरह के नशे को भरपेट पिया है। उनमें से एक ताज भी भगवान श्रीकृष्ण की परम भक्ता हुई है। ताज एक कट्टर मुसलमान की लड़की थी। एक बार उसने भगवान श्रीकृष्ण का एक परम मनोहर चित्र देखा, तो अपना तन-मन भुला बैठी। वह लगातार भगवान के सुंदर स्वरूप को देखती ही रही तथा मन ही मन उसने प्यारे कन्हैया को पति मान लिया। अब तो दिन-रात उन्हीं के ध्यान में मग्न रहती। कृष्ण-प्रेम उसकी रग-रग में भर गया। श्रीकृष्ण के अलावा उसे कुछ अच्छा नहीं लगता। प्यारे कन्हैया! प्यारे कन्हैया कहते-कहते कभी हंसती, कभी रोने लगती और कभी मौन रहने लगती। किसी से बात करना उसे सुहाता नहीं। नदी किनारे जहां कन्हैया की लीला-कथायें कही जाती थीं, वहां पर ताज प्रतिदिन जाया करती। यह देख उसके पिता ने उसे एक दिन बहुत मारा और कहने लगे– तू मुसलमान के घर पैदा होकर, हिन्दुओं के देवता को मानती है। लोगों में तेरे कारण मेरी निंदा हो रही है। संसार में मेरा जीना तूने मुश्किल कर दिया है। अब भी तू मान जा और हिन्दुओं के देवता का पूजन करना छोड़ दे।

परंतु पिता की इन बातों का ताज पर लेशमात्र भी प्रभाव नहीं पड़ा। तब पिता ने उसे एक

कोठरी में बंद कर दिया हैं। ताज तीन दिन तक बिना कुछ खाये-पिये उसी कोठरी में प्यारे कन्हैया को याद करती रही। ताज को विरह-योग की प्राप्ति हुई। इसी कारण वह विरहाग्नि में जल रही थी। परंतु वह ऐसी स्थिति में भी प्रसन्न थी।

चौथे दिन पिता ने ताज की एक प्रिय सहेली 'दिलजानी' को उसे समझाने के लिए भेजा। दिलजानी ने ताज को बहुत समझाया, परंतु ताज की लगन सच्ची थी। उसने कहा–

सुनो दिलजानी मेरे दिल की कहानी तुम,
इश्क में बिकानी बदनामी भी सहूंगी मैं।
नंद कौ कुमार कुरबान बांकी सूरत पे,
हौ तो तुरकानी हिंदुआनी ह्वै रहूंगी मैं।।

ताज का ऐसा उत्तर पाकर दिलजानी लौट आई। आखिर, पिता ने ताज को घर से बाहर निकाल दिया। ताज अपने प्रियतम की खोज में सीधी वृंदावन की ओर चल दी। वहां जाकर वह प्रभु-विरह में ऐसी विभोर हो गयी कि कृष्ण के बिना रहना मुश्किल हो गया। उसके ऐसे निश्चल अनन्य प्रेम को देखकर प्यारे कन्हैया भी रह न पाये और अपनी भक्तिमता ताज के समक्ष प्रकट हो गये। आज भक्त और भगवान का साक्षात् मिलन हो गया और ताज का प्रभु-विरह एक योग सिद्ध हुआ। बस अपने प्यारे कन्हैया को देखने के लिए ही तो जीवित थी।

प्यारे कान्हा की सुंदर मोहनी सूरत को एकटक करके निहारा और प्यारे कान्हा! प्यारे कान्हा! कहते-कहते ताज अपने नश्वर शरीर का त्याग करके प्रभु के विग्रह में समा गयी।

धन्य हैं ऐसे भक्त, जिन्हें प्रभु की यह दिव्य देन प्राप्त हुई। हम भी ऐसे भक्तों की तरह प्रभु से निश्चल प्रेम करें। मेरे प्यारे कान्हा! मेरे प्यारे कान्हा! रटते रहें- इसी नाम से ही जीवन का कल्याण है और यही गीता का सार है।

गुरु बिना ज्ञान नहीं

मीना बठीजा

श्रीमद्भगवद्गीता भगवान के मुखारविन्द से निकला हुआ अमर उपदेश है। जो भी जीव इस अमर उपदेश को चाहे वह जिस देश में हो या जिस भेष में, श्रद्धा सहित धारण करता है वह जीवत्व को छोड़कर अमृतत्व की प्राप्ति करता है। इसमें कोई संशय नहीं है। हमारा शरीर स्थूल और सूक्ष्म है। वैसे ही हमारा मन स्थूल और सूक्ष्म है। मनुष्य जप-तप-दान करता है तो अपने मन को शुद्ध करता है- सूक्ष्म मन तो तभी शुद्ध-पवित्र होगा जब सतगुरु कृपा करेंगे। इसलिये भक्त के जीवन में सद्गुरु की आवश्यकता है। क्योंकि सद्गुरु मिलने पर ही मनुष्य का नया जन्म होता है। जब तक संत कृपा नहीं करते तो मनुष्य पशु के समान है। लेकिन गुरु मिलते ही गुरु की कृपा और दृष्टि पड़ते ही उनका कल्याण होता है। जैसे मछली जल में अपने अंडे को थोड़ी-थोड़ी देर में देखती रहती है तो वह अंडा पक जाता है। ऐसे ही गुरु की कृपा दृष्टि पड़ने से शिष्य को ज्ञान प्राप्त हो जाता है। जगत में तीन बड़े देव माने गये हैं। ब्रह्मा, विष्णु, महेश- ये तीन देव अपना एक-एक काम करते हैं। ब्रह्मा उत्पत्तिकर्ता हैं, विष्णु पालनकर्ता हैं और शिवजी संसार में प्रलय करते हैं। किंतु सद्गुरु ये तीनों कार्य करते हैं। इसलिये गुरु की वंदना की गई है।

गुर्रु ब्रह्मा गुर्रु विष्णु गुर्रु देवो महेश्वरः।
गुरु साक्षात् परब्रह्म तस्मै श्री गुरवे नमः।।

देवी भागवत : श्री जगदम्बिकायै नमः

गतांक से आगे....

● जैमल सिंह

विधि का जैसा विधान है उसे कोई नहीं टाल सकता है। अतः आप अपने स्वामी के पास जाकर मेरी बातें सुना दो फिर जैसी वो आज्ञा दें वैसा ही तुम करना।

मंत्री ने सारी बातों से महिषासुर को अवगत कराया। तब मंत्री ताम्र को आदेश हुआ कि वह सेना लेकर जाये और दंड-भेद नीति से देवी को ले आये, मैं उससे विवाह करूंगा। सेनापति ताम्र ने देवी जगदम्बा को महिषासुर का आदेश सुनाया। जगदम्बा ने सेनापति ताम्र से कहा कि तेरा स्वामी मृत्यु को गले लगाना चाहता है, मैं पति को वरण करने वाली स्त्री नहीं हूं, मेरे शक्तिशाली पतिदेव विराजमान हैं। वे सबके कर्ता, साक्षी, अकर्ता, निरालम्ब, निराश्रय, सर्वज्ञ, निर्गुण, निर्मम, अनन्त, सर्वगामी, पूर्णाशय एवं कल्याणस्वरूप हैं वे सर्वत्र विराजमान हैं। क्षमा शान्ति के वे साकार विग्रह हैं। ऐसे सुयोग्य पति को छोड़कर मूर्ख महिषासुर की सेवा मैं कैसे कर सकती हूं। उसे अच्छी तरह समझाकर मेरा आदेश सुना दे। मंत्री ने यह सब महिषासुर को बता दिया। वह आगबबूला होकर युद्ध के लिये तैयार हुआ। परंतु पहले मंत्रणा की कि यह स्त्री न मानुषी है, न गान्धर्वी और न आसुरी ही है, यह देवताओं द्वारा रची गई माया है।

महिषासुर ने पुनः ताम्र से कहा कि तुम धैर्य धारण करके जाओ और कैसे भी स्त्री को मेरे पास लाओ। उसके मन के अनुसार ही व्यवहार करना। इस तरह ताम्र देवी के पास पहुंचा तथा उनके स्वरूप की प्रशंसा करके प्रार्थना की कि वह हमारे स्वामी महिषासुर की सेवा में आ जायें। उनको सभी प्रकार की सुख-सुविधा प्राप्त होंगी और सारे मनोरथ पूर्ण होंगे। तब देवी ने बताया कि मैं देवताओं को भी वरण करने वाली स्त्री नहीं हूं। तब महिषासुर को कैसे वरण कर सकती हूं। देवी ने भयंकर गर्जना की जिससे पृथ्वी कांपने लगी, पहाड़ डगमगाने लगे तथा दैत्य स्त्रियों के गर्भपात हो गये। इससे ताम्र घबरा गया और महिषासुर के पास आकर सारी बात बतायी। महिषासुर ने मंत्रियों के साथ मंत्रणा की और कहा कि युद्ध में मारे जायेंगे तो स्वर्ग पायेंगे, जीतेंगे तो राज्य सुख भोगेंगे। अतः ताम्राक्ष, वाष्कल, दुर्मुख, चिक्षराख्या, असिलोमा तथा विडालाक्ष सभी ने बारी-बारी देवी के पास जाकर विचार रखे ताकि वह उनके स्वामी का दासपना स्वीकारें, पर देवी ने सभी को ठिकाने लगा दिया। अन्ततोगत्वा देवी ने उन्हें बताया कि संत पुरुषों की रक्षा, वेदों को सुरक्षित रखना तथा दुष्टों का संहार मेरा लक्ष्य है। मैं समयानुसार अनेक अवतार लेती हूं। सुरद्रोही महिषासुर बड़ा भारी खल है इसने वर लिया है कि मुझे कोई स्त्री ही मार सकती है। अतः मेरा अवतार उसके संहार के लिये ही हुआ है। जब महिषासुर ने सैनिकों व नायकों से यह सब जाना कि देवी वह नहीं है जो तुम्हारी बातों में आ जाये तो महिषासुर स्वयं युद्ध के लिए अग्रसर हुआ तथा अपना सुंदर रूप बनाकर देवी के पास पहुंचा। भैंसे का रूप त्यागकर सुंदर पुरुष रूप बनाया ताकि देवी उसे पसंद कर लें। उसने देवी को बताया चाहे कोई स्त्री हो या पुरुष सब सुख भोगना चाहते हैं तथा सुखों की व्याख्या की। उसने कहा कि तुम मेरी दासता स्वीकार कर लो मैं देवताओं को नहीं सताऊंगा और आपकी आज्ञा का पालन करूंगा। मैं अपनी रूचि के अनुसार अनेक रूप धारण कर सकता हूं। अतः तुम मेरी पटरानी बन जाओ। तुम्हें जिस प्रकार सुख प्राप्त

हो मैं वही कार्य करूंगा। तुम्हारे रूप ने मेरे मन को मोह लिया है। अब मैं आपकी शरण में हूं। इस प्रकार महिषासुर अनाप-शनाप बक रहा था। तब देवी ने उसको कहा तेरी बुद्धि बड़ी खोटी है। इसी से तू स्त्री संबंधी सुख के लिये इतना लालायित है। अरे पुरुष को बांधने के लिये स्त्री एक जंजीर है। स्त्री का संग करने में महान कष्ट उठाना पड़ता है। सुखी होना चाहता है तो मन में शांति रख और देवताओं से बैर छोड़कर पाताल चला जा अन्यथा युद्ध कर। तदन्तर भगवती जगदम्बा और महिषासुर में परस्पर अत्यंत भयंकर युद्ध आरम्भ हो गया जिसमें सारे दानव मारे गये। तब देवताओं ने कहा देवी तुम्हारी शक्ति के प्रभाव से ब्रह्मा इस जगत की सृष्टि करने, विष्णु पालन करने तथा संहार के अवसर पर रूद्र नाश करने में सफल होते हैं। जगत की सृष्टि, स्थिति तथा नाश का कार्य तुम्हारे ही ऊपर आ रहा है। कीर्ति, मति, स्मृति, गति, करूणा, दया, श्रद्धा, धृति, वसुधा, कमला, अजपा, पुष्टि, कला, विजया, गिरिजा, जया, तुष्टि, प्रभा, बुद्धि, उमा, रमा, विद्या, क्षमा, कान्ति और मेधा ये सब नाम आपके ही पुकारे नाम हैं। धारणा शक्ति भी तुम ही हो। देवताओं तथा दानवों में मेरी जो देह धारण कर आपका भजन स्मरण नहीं करता वह मूर्ख है। तुम्हारे चरण कमल की रज को छोड़कर हमारे लिये और कोई शरण नहीं है।

मनुष्यों को संसार रूपी समुद्र से पार उतारने के लिये भगवती का यह परम पावन चरित्र अल्प पुण्य वाले मानवों के लिये कठिन है। वेद के पारगामी विद्वानों के लिये जो धर्म, अर्थ और काम चाहने वालों को तो देवी भागवत का अवश्य पान करना चाहिए। तब राजा जन्मेजय ने वेद व्यास जी से प्रार्थना की कि वे मुझे देवी भागवत का रसपान करवायें। उनके आग्रह पर बताया कि देवी, मणिद्वीप एक रमणीय धाम है, वहां वह सदा ही क्रीड़ा किया करती हैं। वह स्थान समुद्र के मध्य में है, वहां पहुंचने पर ब्रह्मा, विष्णु, महेश को भी स्त्री हो जाना पड़ा था। भगवती वहां कई प्रकार की लीला किया करती हैं। देवताओं द्वारा पूजित व स्तुत होने के बाद कल्याणमयी देवी वहीं पधार गईं। वे माया शक्ति और सनातनी हैं। उस दिव्य स्थान पर अविच्छिन्न गति से उनका कीर्तन होता है। सम्पूर्ण चराचर की अधिष्ठात्री देवी पधार गयीं- यह देखकर देवताओं ने एक सूर्यवंशी महाबाहु नरेश को भूमण्डल का अध्यक्ष बना दिया। शत्रुघ्न नाम से विख्यात वह नरेश सम्पूर्ण शुभ लक्षणों से सम्पन्न था। वह अयोध्या में रहकर राज्य करने लगा। प्रजा सुख से समय व्यतीत करने लगी। वृक्ष फलों-फूलों से लदे रहते थे और दुधारू गायें मनुष्यों को इच्छानुसार दूध देती थीं। ब्राह्मण यज्ञशील वेदतत्व के जानकार थे। उस समय धरातल पर ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र सबके सब देवी भक्त तथा उपासक थे। स्त्रियां सुशील पतिव्रता और सत्यभाषी थीं। पुत्र पिता में श्रद्धा रखने वाले तथा धर्मशील होते थे। किसी की अकाल मृत्यु नहीं होती थी। सम्पूर्ण मानव आनन्द भोगते थे। सभी मानव भगवती चण्डिका की सेवा में परायण रहते थे। देवी का उत्तम चरित्र सम्पूर्ण प्राणियों को सुख देने वाला तथा सारे पापों का नाश करने वाला है।

शुम्भ-निशुम्भ दोनों राक्षस बड़े बलवान थे तथा देवताओं को सताना इनका काम था। देवी द्वारा इनका भी वध हुआ तथा चण्ड-मुण्ड, रक्तबीज एवं धूम्रलोचन भी मारे गये। फिर देवताओं द्वारा सुपूजित होकर हिमालय पर्वत पर पधार गयीं। देवी प्राणियों को मोह में डालने वाली महामाया है। समस्त देवता, मनुष्य, गन्धर्व, नाग, राक्षस, वृक्ष, लता, पशु, मृग और पक्षी सब के सब माया के अधीन हैं। उसी महामाया के प्रभाव से प्राणी मोह में जकड़ा हुआ है।

क्रमशः

सर्वधर्मान्परित्यज्य मामेकं शरणं व्रज

(महाराजश्री के प्रवचनों पर आधारित)

पुरुषोत्तम भारद्वाज

भगवान ने गीता में अपनी प्राप्ति के लिये, अर्जुन को निमित्त बनाकर अनेकों सरल साधन रूप युक्तियां कही हैं। उन ढेर सारी युक्तियों में से किसी एक युक्ति की भी बात समझ में आ जाये और मनुष्य उसके अनुसार आचरण करे तो उसका जन्म निःसंदेह सफल हो जाता है। भगवान जीवों के सुहृद हैं, वे सरल से सरल उपाय बताकर कर्मबन्धन में भटक रहे जीव के कल्याण के लिये इस प्रकार से आश्वासन दे रहे हैं-

भगवान बोले-

सर्वधर्मान्परित्यज्य मामेकं शरणं व्रज।
अहं त्वा सर्वपापेभ्यो मोक्षयिष्यामि मा शुचः।।

गीता-१८/६६

सभी धर्मों को त्यागकर एक मेरी ही शरण में आ जाओ। मैं तुम्हें सभी प्रकार के पापों से मुक्त कर दूंगा। तुम शोक मत करो।

भगवान ने सभी प्रकार के पापों से मुक्त कराने की इतनी सरल युक्ति बता दी, जिसका आचरण साधारण से साधारण मनुष्य द्वारा भी आसानी से किया जाना संभव है। गीता के श्लोक का केवल अर्थ समझकर आचरण करने से अर्थ का अनर्थ होना संभव है। श्लोक के अर्थ से अधिक महत्व श्लोक के भाव को समझने का है। कई मनुष्यों को इस श्लोक में कही बात के बारे में शंका होना स्वाभाविक हो जाता है कि धर्म को सही प्रकार से जानने के लिये तो गीता उपदेश है, फिर उस धर्म को त्यागकर कैसे मनुष्य का कल्याण होना संभव हो सकता है?

इस श्लोक में धर्म को छोड़कर भगवान की शरण लेने की बात नहीं कही है, धर्मों को छोड़ने की बात कही है। जब ईश्वर एक है, तो धर्म भी एक ही होना स्वाभाविक है। अतः धर्म एक है, पंथ अनेक हैं। धर्म ईश्वर द्वारा रचित है और पंथ मनुष्य द्वारा रचित हैं। ईश्वर पूर्ण है और मानव अपूर्ण है। इस श्लोक में भगवान ने धर्म को त्यागकर शरण लेने की बात नहीं कही है, भगवान ने तो कहा है- 'सभी धर्मों को त्यागकर एक मेरी शरण में आ जाओ, मैं तुम्हें सभी पापों से मुक्त कर दूंगा। वे बहुत सारे धर्म हैं इन्द्रियों के धर्म- इन्द्रियां स्वभाव से लोभ वृत्ति वाली हैं और बाह्य विषयों (शब्द, स्पर्श, रूप, रस, गन्ध) को भोगने के लिये सदा लालायित रहती हैं। इन्द्रियों के विषयों में राग-द्वेष, सुख-दुःख, हानि-लाभ का अनुभव कराने वाले द्वंद्व रहते हैं और ये द्वंद्व बुद्धि को स्थिर नहीं रहने देते। इसी कारण द्वंद्वों को कल्याण मार्ग में बाधा उत्पन्न करने वाले शत्रु कहा गया है।

इन्द्रियां ही मनुष्य को कल्याण मार्ग से विमुख कर संसार में भोग-ऐश्वर्य का प्रलोभन देकर जीवन भर मनुष्य को संसार में फंसाए रखती हैं। सभी पाप कर्मों में प्रवृत्ति का मूल कारण इन्द्रियों का विषय सुख का प्रलोभन ही है। इन्द्रियों के जाल में फंसकर ही मनुष्य विषय भोग सुख को ही अपने जीवन का

परम लक्ष्य मानकर कल्याण मार्ग से विमुख होने का कारण बनता है।

भगवान के कहने का भाव यह है कि इन्द्रियों के विषयों के सभी प्रकार के प्रलोभनों को त्यागकर एक मेरी शरण में आ जाओ। जब तक इन्द्रियों की शरण में मनुष्य रहते हैं तब तक उनका कल्याण होना संभव ही नहीं होता। इन्द्रियों की शरण लेने से कर्मबन्धन की प्राप्ति होती है और भगवान की शरण लेने से मुक्ति की प्राप्ति होती है। इन दो प्रकार की शरण में धरती-आकाश का अंतर है। जहां अंधकार रहता है वहां प्रकाश नहीं रहता और जहां प्रकाश रहता है, वहां अंधकार नहीं रहता।

मोहग्रस्त अर्जुन ने भगवान को निश्चित रूप से कल्याण होना किस मार्ग के अनुसरण से होना निश्चित है, उसके लिये गीता के दूसरे अध्याय के सातवें श्लोक में प्रार्थना की थी। अर्जुन की प्रार्थना को ध्यान में रखकर ही ढेर सारी युक्तियां बताकर एक अति सरल और अति उत्तम युक्ति बताकर अर्जुन को कहा है कि इन्द्रियों के सभी प्रकार के प्रलोभन रूपी धर्मों को त्यागकर एक मेरी शरण में आ जाओ, मैं तुम्हारे जन्म-जन्मांतरों के पापों से तुम्हें मुक्त कर दूंगा- तुम शोक मत करो।

इन्द्रियों के विषय में रहने वाले द्वंद्व ही बुद्धि को भी स्थिर नहीं रहने देते और विवेक को ढककर अन्तःकरण को भी अंधकारमय बनाकर जीवात्मा के पतन के कारण बनते हैं। ●

हृदयरोग : सुरक्षा व उपाय

हृदयरोग की सरल, अनुभूत चिकित्सा

(1) लौकी हृदय के लिए हितकर, कफ–पित्तशामक व वीर्यवर्धक है। एक कटोरी लौकी के रस में पुदीने व तुलसी के 7–8 पत्तों का रस, 2–4 काली मिर्च का चूर्ण व 1 चुटकी सेंधा नमक मिलाकर पीयें। इससे हृदय को बल मिलता है और पेट की गड़बड़ियाँ भी दूर हो जाती हैं।

(2) नींबू का रस, लहसुन का रस, अदरक का रस व सेवफल का सिरका समभाग मिलाकर धीमी आँच पर उबालें। एक चौथाई शेष रहने पर नीचे उतारकर ठंडा कर लें। तीन गुना शहद मिलाकर काँच की शीशी में भरकर रखें। प्रतिदिन सुबह खाली पेट 2 चम्मच लें। इससे रक्तवाहिनियों का अवरोध खुलने में मदद मिलेगी। (यह अनुभूत योग है तथा अत्यंत कारगर भी है।)

(3) अगर सेवफल का सिरका न मिले तो पान का रस, लहसुन का रस, अदरक का रस व शहद प्रत्येक 1–1 चम्मच मिलाकर लें। इससे भी रक्तवाहिनियाँ साफ हो जाती हैं। लहसुन गरम पड़ता हो तो रात को खट्टी छाछ में भिगो रखें।

(4) उड़द का आटा, मक्खन, अरण्डी का तेल व शुद्ध गूगल समभाग के बाद हृदय स्थान पर इसका लेप करें। 2 घंटे बाद गरम पानी से धो दें। इससे रक्तवाहिनियों में रक्त का संचारण सुचारू रूप से होने लगता है।

(5) एक ग्राम दालचीनी चूर्ण एक कटोरी दूध में उबालकर पियें। दालचीनी गरम पड़ती हो तो एक ग्राम यष्टिमधु चूर्ण मिला दें। इससे कोलेस्ट्रॉल की अतिरिक्त मात्रा घट जाती है।

(6) भोजन में लहसुन, किशमिश, पुदीना व हरा धनिया की चटली लें। आँवले का चूर्ण, रस, चटनी, मुरब्बा आदि किसी भी रूप में नियमित सेवन करें।

(7) औषधि कल्पों में स्वर्णमालती, जवाहरमोहरा पिष्टि, साबरशृंग भस्म, अर्जुनछाल का चूर्ण, दशमूल क्वाथ आदि हृदयरोगों का निर्मूलन करने में सक्षम हैं।

स्वधर्म और परधर्म

वीरेन्द्र कुमार शुक्ला

अपने स्वधर्म पालन में कष्ट भी आ जावे तो भी वह कल्याणकारक है, क्योंकि वह कष्ट नहीं तप है। इस प्रकार के कष्ट से तप की अपेक्षा उन्नति शीघ्र होती है, कारण तप अपने लिये किया जाता है। जानकर किये हुए तप से उतना लाभ नहीं होता जितना स्वतः आये हुए कष्ट रूपी तप से होता है। स्वधर्म पालन करते हुए मर भी गये तो धर्मात्मा पुरुष अमर हो गये हैं। निष्काम भाव पूर्वक धर्म पालन में कष्ट या मृत्यु भी आ जावे तो उससे लोक में प्रशंसा ही होती है। आजादी की लड़ाई में कितनों ने कष्ट सहे, जेल गये, फांसी पर लटके, आज भी उनकी प्रशंसा की जाती है। स्वधर्म पालन में व्यक्ति की दृष्टि धर्म पर होती है। धर्म पालन में मृत्यु भी हो जावे तो उद्धार ही होता है। यह गीता का उपदेश है। गीता भगवान की वाणी है अतः श्रद्धा विश्वास का विषय है। जिस विषय का हमें पता नहीं उसके बारे में शास्त्र ही मार्गदर्शक होते हैं। जो धर्म की रक्षा करता है उसकी रक्षा, धर्म करता है। 'धर्मो रक्षति रक्षितः' क्योंकि धर्म के उपदेष्टा भगवान, वेद, शास्त्र, ऋषि मुनि आदि हैं। उन्हीं की शक्ति से पालन करने वाले का कल्याण होता है। पतिव्रत धर्म पालन करने वाली स्त्री का कल्याण पति नहीं करता। उसे बनाने वाले परमात्मा की शक्ति से ही उसका कल्याण होता है। राजा हरिश्चन्द्र धर्म पालन में कष्ट सहते हुए सत्य धर्म से विचलित नहीं हुए परिणाम में प्रजा सहित परधाम को गये। कल्याण का वास्तविक स्वरूप परम शान्ति है, जो स्वधर्म पालन से ही प्राप्त होती है। अब यह समझना होगा कि यह स्वधर्म और परधर्म क्या है? स्वयं परमात्मा का अंश है। स्वयं का कल्याण करना, स्वयं को भगवान के सिवा किसी का न मानना, स्वयं को सेवक मानना, स्वयं को जिज्ञासु मानना, ये सब सही धर्म हैं। ये सब मन, बुद्धि शरीर के धर्म नहीं हैं। बाकी वर्णाश्रम, मन, बुद्धि, अहंकार आदि को लेकर जितने भी धर्म हैं अपने कर्तव्य पालन के लिये स्वधर्म होते हुए भी परधर्म हैं। कारण वे सब माने हुए हैं। उनमें दूसरों की सहायता लेनी पड़ती है, अतः परतंत्रता रहती है। स्वयं के असली धर्म में किसी की सहायता नहीं लेनी पड़ती। परमात्म प्राप्ति के साधक को धन, मान, बड़ाई आदि पाने की इच्छा नहीं होती, अतः न मिलने पर वह चिन्ताग्रस्त भी नहीं होता, तथा प्रारब्धवश कुछ मिल भी जावे तो कोई प्रसन्नता भी नहीं होती, कारण उसका लक्ष्य परमात्म प्राप्ति का ही होता है। जैसे डाक्टर का लक्ष्य आपरेशन की सफलता पर ही होता है। इसके परिणामस्वरूप रोगी का मन भी प्रसन्न रहता है। ऐसे ही परमात्म प्राप्ति का लक्ष्य होने पर स्वाभाविक प्रसन्नता ही रहती है। अनुकूल-प्रतिकूल परिस्थितियां तो साधन मात्र होती हैं। राग-द्वेष के कारण स्वधर्म और परधर्म का ज्ञान ढक जाता है। शरीर को 'मैं' और 'मेरा' मानने से ही राग-द्वेष होते हैं। यदि शरीर ही अपना स्वरूप 'मैं' होता तो स्वरूप के रहते शरीर भी रहता या शरीर के न रहने पर स्वरूप 'मैं' भी न रहता। स्वरूप नित्य है परमात्मा का अंश है। हम शरीर को साथ लाए नहीं, ले जा सकते नहीं, इच्छानुसार परिवर्तन कर सकते नहीं, फिर वह मेरा कैसे हो सकता है। इस प्रकार शरीर स्वरूप नहीं है। यह ज्ञान रहता तो सभी साधकों में है, पर इसे महत्व न देने के कारण राग-द्वेष

नहीं मिटते हैं। विवेक को महत्व देने पर राग-द्वेष मिट जाते हैं और अन्तःकरण में स्वधर्म-परधर्म का ज्ञान हो जाता है तथा उसके अनुसार स्वतः चेष्टा होती है। परमात्मा और उसका अंश स्वयं है, तथा प्रकृति और उसका कार्य, शरीर और संसार अन्य है। इस तरह स्वधर्म और परधर्म हुए। सूक्ष्म दृष्टि से निर्विकारता, निर्दोषता, अविनाशता, नित्यता, निष्कामता, निर्ममता आदि स्वयं के धर्म हैं, अतः स्वधर्म हैं तथा उत्पन्न होना, मरना, बढ़ना, क्षीण होना जितने भी शरीर के धर्म हैं वे संसार के हैं, अतः परधर्म हैं। स्वधर्म पालन में अभ्यास की आवश्यकता नहीं होती। अभ्यास शरीर के सम्बंध से ही होता है और शरीर के सम्बंध से सभी परधर्म हैं। 'स्व' के दो अर्थ हैं एक स्वयं और दूसरा परमात्मा। मनुष्य में दो प्रकार की इच्छाएं होती है एक सांसारिक दूसरी परमार्थिक। सांसारिक में भोग और संग्रह होता है तथा परमार्थिक में अपने कल्याण की इच्छा होती है। असत संसार और शरीर के साथ सम्बन्ध जोड़ने पर भोग और संग्रह की इच्छा होती है। यह कार्य परधर्म है। स्वयं परमात्मा का अंश होने के कारण स्वयं में कल्याण की इच्छा परमात्मा की ही है संसार की नहीं। स्वधर्म पालने में मनुष्य स्वतंत्र है क्योंकि इसमें मन बुद्धि शरीर आदि की आवश्यकता नहीं होती वरन् उसके त्याग की आवश्यकता है। इसके विपरीत परधर्म पालने में मनुष्य परतंत्र है कारण इसमें शरीर, इन्द्रियां, मन, बुद्धि, देश, काल, वस्तु आदि की आवश्यकता है।

श्रेयान्स्वधर्मो विगुणः परधर्मात्स्वनुष्ठितात्।
स्वधर्मे निधनं श्रेयः परधर्मो भयावहः।।

स्वयं परमात्मा का अंश है तथा शरीर संसार का अंश है, जिसे वह अपना मान लेता है, तदनुसार उसका स्वधर्म, परधर्म बन जाता है। स्थूल सूक्ष्म और कारण शरीर से किये जाने वाले तीर्थ, व्रत, तप, दान, चिन्तन, ध्यान आदि शुभ कर्म यदि सकाम भाव से अपने लिये किये जायें तो वे परधर्म ही हैं, पर यदि निष्काम भाव से किये जावें तो स्वधर्म हो जाते हैं। निष्काम और सकाम भाव प्रकृति के सम्बंध से ही आता है। अतः कामना होने से परधर्म ही होता है। स्वधर्म मुक्त करने वाला होता है तथा परधर्म बांधने वाला है। स्वधर्म की सिद्धि के लिये यह मनुष्य शरीर मिला है। परधर्म की विमुखता एवं स्वधर्म के सम्मुख होने का कार्य केवल मनुष्य योनि में ही सम्भव है। अन्य योनियां तो भोग शरीर हैं। संसार में जितने दुःख शोक चिन्ता आदि हैं वे परधर्म का आश्रय लेने के कारण ही होते हैं। योगी होना भी परमात्म प्राप्ति का साधन है। योगी होने के तीन मार्ग हैं कर्म ज्ञान और भक्ति। त्याग कर्मयोग है, बोध ज्ञानयोग है तथा प्रेम भक्तियोग है। ये सब स्वधर्म ही हैं। स्वधर्म को गीता में सहज कर्म, स्वकर्म, स्वभावज कर्म के नाम से भी कहा गया है।

अस्तु

विशेष सूचना

(१) गुरु प्रसाद पत्रिका प्रत्येक मास के दिनांक ०२/०३ को अग्रिम प्रकाशित कर डाक में डाली जाती है। यदि किसी सदस्य को सम्बन्धित महीने के दिनांक १० तक न मिले तो नजदीकी डाकघर से जानकारी प्राप्त करें। फिर भी यदि किसी सदस्य को पत्रिका न मिले तो कार्यालय को सूचित/पत्र व्यवहार करें। यदि पत्रिका उपलब्ध होगी तो पुनः भेज दी जाएगी।

(२) किसी सदस्य के दिये हुये पते में परिवर्तन होता है तो इसकी सूचना पुराने पते सहित नया पता कार्यालय को भेजें, ताकि पत्रिका नये पते पर भेजी जा सके।

ब्रह्मपुराण के अंतर्गत वर्णित पार्वती जी और भगवान महादेव जी का संवाद

शीलवान दानी तथा सदाचारी पुरुष ही स्वर्ग जाता है

रमेशचन्द्र वर्मा

पार्वती जी ने पूछा- हे भगवन! किस प्रकार शील तथा सदाचारी पुरुष किन कर्मों अथवा दान से स्वर्ग में जाता है?

महादेव जी ने उत्तर दिया- जो दीन-दु:खी और कृपण आदि को भक्ष्य, भोज्य, अन्न, पान और वस्त्र देने वाला है जो यज्ञमण्डप, धर्मशाला, पौंसला बनवाता है। आसन, शैया, सवारी, घर, रत्न, धन, धान्य तथा खेत आदि वस्तुओं का शांत चित्त से दान करता है। वह व्यक्ति देवलोक में जन्म लेता है और वहां उत्तम भोगों का उपभोग करता है। देवि! वहां से च्युत होने पर वह मनुष्यों के सौभाग्यशाली कुल में जन्म लेता है। वह समस्त मनोवांछित गुणों से युक्त, प्रसन्न, पर्याप्त भोग-सामग्रियों से युक्त एवं धनवान होता है। जो दानशील महाभाग प्राणी है, ब्रह्मा जी ने उन्हें सर्वप्रिय बतलाया है। इसके सिवा दूसरे मनुष्य ऐसे हैं, जो देने में कृपण होते हैं। ऐसे मूर्ख लोग घर में अन्न रहते हुए किसी को अन्न नहीं देते। दीनों, अंधों, दुखियों, याचकों और अतिथियों को देखकर मुंह फेर लेते हैं। कभी किसी को धन, वस्त्र, भोग आदि पदार्थ नहीं देते। जो लोभी, नास्तिक और दान रहित होते हैं वे नरक में पड़ते हैं। कालचक्र के परिवर्तन से यदि मनुष्य योनि मिल जाती है। तब वे निर्धन-कुल में जन्म पाते हैं, वहां वे कम बुद्धि के भी होते हैं वे भूख-प्यास का कष्ट सहते हैं और पापपूर्ण जीवन व्यतीत करते हैं। इस कुल में भोग-सामग्री बहुत थोड़ी होती है। अत: अल्प भोग परायण होते हैं। देवि! इस प्रकार दान न करने से मनुष्य निर्धन होते हैं।

उनसे भिन्न अन्य मनुष्य दम्भी और अभिमानी होते हैं। वे मंदबुद्धि मानव आसन देने योग्य गुरुजनों, विद्वानों आदि के आने पर उन्हें बैठने के लिए पीढ़ा तक नहीं देते। जो अर्घ्य पाने योग्य हैं, उनका वे विधिपूर्वक पूजन नहीं करते। अभीष्ट एवं श्रेष्ठ गुरुजन आदि से छल, कपट रहित अर्थात् प्रेमपूर्वक वार्तालाप नहीं करते। अभिमान के साथ ही लोभवश वे माननीय पुरुषों का भी अनादर और बड़े बूढ़ों का तिरस्कार करते हैं। ऐसे स्वभाव वाले पुरुष नरक में जाते हैं। यदि वे कभी उस नरक से छुटकारा पाते हैं तो बहुत वर्षों तक अन्यान्य योनियों में भटकने के बाद घृणित, अज्ञानी, चाण्डाल आदि के निन्दित कुल में जन्म पाते हैं। गुरुजनों और वृद्ध पुरुषों को संताप देने वाले लोगों की यही गति होती है।

जो न दम्भी है न मानी है, जो देवताओं और अतिथियों का पूजक, सबको नमस्कार करने वाला, मधुरभाषी, दूसरों को सब प्रकार से प्रिय करने वाला समस्त प्राणियों को सदा प्रिय मानने वाला, द्वेषरहित, प्रसन्न मुख, कोमल स्वभाव वाला, सबसे स्नेहमय बचन बोलने वाला, प्राणियों की हिंसा न करने वाला, श्रेष्ठ पुरुषों का सत्कार करने वाला, गुरु पूजक और अतिथि को अन्न का अग्रभाग अर्पित करने वाला है ऐसा व्यक्ति स्वर्ग को जाता है। और इस तरह मनुष्य अपने किए हुए कर्मों का फल स्वयं ही भोगता है। यह साक्षात् ब्रह्माजी का बताया हुआ धर्म है।

जिसका आचरण निर्दयतापूर्ण होता है, जो

सब प्राणियों के मन में भय उपजाता है और जीवों को कष्ट देता है, हिंसा के लिये उद्वेग पैदा करता है, जीवों पर आक्रमण करता और उन्हें उद्विग्न बनाता है। ऐसे स्वभाव वाला और आचरण वाला मनुष्य नरक में पड़ता है। यदि वह कालक्रम से मनुष्य योनि में जाता है तो अधम-कुल में जन्म लेता है, वहां उसे नाना प्रकार की बाधाएं और क्लेश सहन करने पड़ते हैं और सब लोकों का द्वेष पात्र होता है।

इसके विपरीत जो सब प्राणियों को दयापूर्ण दृष्टि से देखता है, सबके प्रति मैत्रीभाव रखता है, पिता के समान निर्वैर होता है, दयालु होने के कारण प्राणियों को न डराता है और न मारता है, जो सम्पूर्ण जीवों का विश्वासपात्र है, किसी भी जीव को अस्त्र-शस्त्रों से उद्वेग नहीं पहुंचाता, शुभ कर्म करता और सब पर दया रखता है, ऐसे शील और आचरण वाला मनुष्य स्वर्ग में जाता है। वहां देवताओं की भांति वह दिव्य भवन में सानन्द निवास करता है। वह यदि पुण्यक्षय के बाद मर्त्यलोक में जाता है तो मनुष्यों में क्लेशरहित एवं निर्भय होता है। वह सुख से जन्म लेता और अभ्युदयशील होता है। देवि! यह साधु पुरुषों का मार्ग है, जहां किसी प्रकार की बाधा नहीं है। ●

गीता के बिना गति नहीं

मधु भारद्वाज (गीता रत्न)

एतन्मे संशयं कृष्ण छेत्तुमर्हस्यशेषतः।
त्वदन्यः संशयस्यास्य छेत्ता न ह्युपपद्यते।।
गीता-६/३९

गीता-गायक भगवान श्रीकृष्ण से अर्जुन निवेदन करते हैं कि परमात्म प्राप्ति के मार्ग पर चलने वाले जीव ने संसार का आश्रय छोड़ दिया और उसके जीवन का उद्देश्य केवल परमात्मप्राप्ति हो गया, पर प्राणों के रहते-रहते परमात्मा की प्राप्ति नहीं हुई और अन्तकाल में किसी कारण से उस उद्देश्य के अनुसार साधन में स्थिति भी नहीं रही, अर्थात् परमात्म-चिंतन भी नहीं रहा। हे भगवन! ऐसे योगभ्रष्ट की क्या गति होगी? इस बात को लेकर अर्जुन के मन में व्याकुलता भरी हुई थी। यह व्याकुलता भगवान से छिपी नहीं थी। वे भगवान से कहते हैं कि हे परमात्मन! मेरे इस संशय का छेदन करने के लिये आपके सिवाय दूसरा कोई नहीं हो सकता। मेरे इस संशय का सर्वथा छेदन करने के लिये आप ही योग्य हैं क्योंकि अर्जुन को श्रीकृष्ण की भगवत्ता पर विश्वास था तभी यहां वे योगभ्रष्ट की गति के विषय में प्रश्न करते हैं। वे भगवान से कहते हैं कि इस बात को आपके सिवाय दूसरा कोई बता नहीं सकता। आप बिना अभ्यास, परिश्रम के सर्वत्र सब कुछ जानने वाले हैं। आपके समान जानकार कोई हो ही नहीं सकता। आप साक्षात् भगवान हैं और संपूर्ण प्राणियों की गति-अगति को जानने वाले हैं। अतः आप ही मेरे इस संशय का नाश कर सकते हैं।

आत्म-भाव– हे परमात्मन! इस घोर कलियुग में जहां मन भी आपके श्रीचरणों में नहीं लग पाता, आपका ध्यान नहीं कर पाता, तब भी क्या आप हमें उबार लेंगे क्योंकि इस जीव में तो कोई भी ऐसा गुण या कर्म नहीं है जिससे आपको रिझा सकें और आपके आध्यात्मिक पथ का पथिक कहला सकें। फिर आप किस प्रकार जन्म-जन्म से भटकते आए इस जीव पर करूणापूर्वक द्रवित होंगे? यह तो केवल आपकी ही जिम्मेदारी है।

प्रेममूर्ति श्री भरतलाल जी

रामनाथ अग्रवाल

'भरतहि कहहि सराहि सराहि। राम प्रेम मूरति तन आही।। प्रनवउ प्रथम भरत के चरना। जासु नेम व्रत जाहि न वरना।। मागहूं भीख त्याग निज धरमू। आरत काह न करइ कुकरमू।।' चार प्रकार के भक्तों का वर्णन श्री गीता जी (अध्याय ७/१६) में आया है- आर्त, जिज्ञासु, अर्थार्थी और ज्ञानी। **'ग्यानिहि प्रभुहि विशेष पियारा।'** ज्ञानी भक्त भगवान को अत्यंत प्रिय है। भरत जी अर्जुन की भांति आर्त भक्त हैं, साथ ही ज्ञानी भक्त भी हैं। हनुमन्त लाल जी तो ज्ञानियों में अग्रगण्य हैं। अतः भगवान राम हनुमान जी से कहते हैं कि **'तुम मम प्रिय भरतहि सम भाई।'** भरत जी ज्ञानी हैं उन्हें बोध ा है कि भीख मांगना क्षत्रिय धर्म के विरुद्ध है। वह तीर्थराज प्रयाग के पावन त्रिवेणी के तट पर तीर्थराज से भक्ति की भिक्षा मांग रहे हैं क्योंकि वे आर्त अर्थात् दुखी हैं। दुखी व्यक्ति कौन सा अपराध नहीं करता है। वे भगवान राम और माता जानकी के वन गमन के कारण दुखी हैं और स्वयं को अपराधी और दोषी मानते हुए उनके हृदय में संताप है। ज्ञानी होने के कारण वे इसका समाधान निकाल लेते हैं। **'आपनि दारूण दीनता सबहि कहहु सिर नाय। देखे बिनु रघुनाथ पद जिय की जरनि न जाय।।' 'प्रातकाल चलि हहु प्रभु पाही।'** प्रभु की शरण में चल पड़े।

गीता अध्याय ७ श्लोक १४ वे प्रभु की त्रिगुणातीत माया का उल्लंघन कर जाते हैं। तीर्थराज से भिक्षा में **'अरथ न धरम न काम रूचि गति न चहहु निरवान। जनम जनम रवि राम पद यह वरदान न आन।।'** अर्जुन अज्ञानी है उसे बोध नहीं है कि क्षत्रियों का भिक्षा मांगना उनके धर्म के विपरीत है। कुरुक्षेत्र की रणभूमि में सम्भावी युद्ध में स्वजन समुदाय जो अधर्म के पक्ष में युद्ध के लिए तत्पर है, की मृत्यु जो अटल और ध्रुव सत्य है, उसके लिए आर्त, दुखी और शोकाकुल है और भगवान से कहता है कि मैं भिक्षा का अन्न मांगकर अपना जीवन निर्वाह कर लूंगा परंतु भीष्म पितामह, द्रोणाचार्य आदि स्वजन समुदाय से युद्ध नहीं करूंगा। उससे भगवान को कहना पड़ा कि **'मामेकं शरण व्रज'** और ज्ञानी भरत जी ने स्वयं ही निर्णय ले लिया **'प्रातकाल चलि हहु प्रभु पाही।'** अर्जुन कह रहा है कि पूज्यनीय गुरुजनों और वयोवृद्ध को मारने पर मैं पाप का भागी बनूंगा तो भगवान ने कहा कि धर्मयुद्ध करेगा तो मैं तुम्हें समस्त पापों से मुक्त कर दूंगा। **'अहं त्वा सर्वपापेभ्यो मोक्षयिष्यामि मा शुचः।'** तू चिन्ता मत कर। अर्जुन को पाप का भय था। भगवान के आश्वासन मिलने पर अर्जुन का मोह नष्ट हो गया और अब वह संशय रहित हो गया।

भरत जी अपने को पापी इसलिए मानते हैं कि यदि मेरा जन्म नहीं हुआ होता तो मेरे प्रभु को वनवास के कष्ट नहीं उठाने पड़ते। वे कहते हैं कि **'मोहि समान को पाप निवासू। जेहि लगि सीय राम वनवासू।।'** भरत जी माता कौशल्या से कहते हैं यदि राम वनगमन में मेरी सहमति हो तो विधाता मुझे पापी की गति प्रदान करे। (रामचरितमानस अयोध्याकाण्ड, दोहा १६८-१६८)। कौशल्या माता भरत जी से कहती हैं। तुम सदैव मन कर्म और वचन से राम को प्रेम करते हो। जो व्यक्ति यह कहता है कि

राम वनगमन में तुम्हारी सहमति थी तो उसे स्वप्न में भी सुख और सुगति नहीं मिलेगी। भरत जी भगवान की भक्ति की भीख मांगकर अपने हृदय को संताप रहित करते हुए आत्मा की तृप्ति चाहते हैं। **'जनम जनम रति राम पद।'** भगवान अर्जुन से कहते हैं कि अपने धर्म के लिये मरना भी श्रेष्ठ है। अर्जुन की पहुंच और विचार शरीर तक ही सीमित है। अर्जुन लक्ष्मण जी की भांति जीवाचार्य है। भिक्षा से प्राप्त अन्न से उदरपूर्ति करके जीवन निर्वाह तक ही जानता है। भरत जी भगवद्भक्ति के लिए बार-बार जन्म और मरण चाहते हैं। अर्जुन की भांति लक्ष्मण जी भी आशंकित रहते हैं। अर्जुन के विचार निम्न स्तर के हैं। लक्ष्मण जी को भी संदेह हो गया कि भरत जी चतुरंगिनी सेना लेकर वन की ओर आ रहे हैं। भरत जी को अयोध्या का राज्य मिल गया होगा और राजपद के मद में विचार किया होगा कि राम लक्ष्मण दोनों भाइयों को वन में मारकर चौदह वर्ष के स्थान पर अनन्त काल तक निष्कंटक राज्य करेंगे। भरत को यह नहीं पता होगा कि राम का छोटा भाई लक्ष्मण अपने बड़े भाई के लिए प्राण दे देगा परंतु राम का बाल भी बांका नहीं होने देगा। भगवान राम ने लक्ष्मण को यह कहते हुए सुन लिया कि भरत को राजमद हो गया है मैं भरत को मार दूंगा। भगवान राम ने लक्ष्मण जी से कहा **'सुबहु लखन मल भरत सरीसा। विधि प्रपंच महु सुना न दीसा।।'** भगवान राम ने अपने जीवन में केवल एक बार लक्ष्मण जी को बहुत बुरी तरह डांटा। लक्ष्मण तुम भली प्रकार सुन लो कि विधाता की बनाई इस सृष्टि में आज से पहले न किसी ने सुना न देखा। लक्ष्मण मैं तुम्हारी शपथ और पिता की सौगंध खाकर कहता हूं कि भरत के समान सुंदर और पवित्र हृदय वाला बन्धु नहीं है। **'लखन तुम्हार सपथ पितु आना। सुचि सुबंधु नहि भरत समाना।।'** यह तो अयोध्या का बहुत छोटा सा राज है भरत का विशाल हृदय क्षीर सागर के समान है, उसे राजमद हो गया। **'भरतहि होहि न रामद विधि हरि हर पद पाइ। कबहुकि काली सीकरहि क्षीर सिन्धु बिनसाइ।।'** भरत जी के पास भगवान विष्णु का कार्यभार है। **'विश्व भरन पोषण कर जोई। ताकर नाम भरत अस होई।।'** यदि उन्हें सृजन ब्रह्मा (बिधि) हर संहार का कार्यभार भी मिल जाये तो भी भरत जी को राजमद नहीं होगा। क्या कांजी (राई और सरसों के दानों से बना खट्टा पानी) की बूंद से दूध का समुद्र फट जायेगा। तुम जीवाचार्य हो, तुम्हारी उड़ान शरीर देह तक सीमित है। भगवान का विरद है। **'निर्मल मन जन सो मोहि पावा। मोहि कपट छल छिद्र न भावा।।'**

भगवान राम भरत जी को प्रसन्न देखने के लिये सरयू तट पर बाल्यकाल में कन्दुक क्रीड़ा में स्वयं जान-बूझकर हार जाते थे। बाल मण्डली 'भरत भैया' की जयघोष के नारे से सरयू तट गुंजायमान कर देती है। भगवान राम प्रसन्न मुद्रा में है। भरत जी का सिर संकोच के कारण नीचा होकर सरयू की रेत कणिका में दृष्टि गड़ी जा रही है और नेत्र से अविरल अश्रुधार बह रही है। आज चित्रकूट की सभा प्रांगण में विदेहराज जनक देह अर्थात् इन्द्रियों से श्रेष्ठ मन जो इन्द्रियों का राजा है वह भी भरत जी के गुणों का वर्णन करने में असमर्थ है। मन एक क्षण में देश-विदेश की यात्रा करके आ जाता है। भरत जी स्वप्न में मन में परहित और स्वार्थ के समस्त सुखों पर ध्यान नहीं देते। वे तो केवल राम के चरणों में प्रेम को ही महत्व देते। **'परमारथ स्वारथ सुख सारे। भरत न सपनेहु मनहु निहारे।।' 'साधन सिद्धि राम पग नेहू। मोहि लखि परत मत एहूं।।'**

क्रमशः

गीतान्तर्गत श्रीकृष्णोक्त गीता माहात्म्य

महेन्द्र वानप्रस्थी

विभिन्न पुराणों में श्रीमद्भगवद्गीता के माहात्म्य का उल्लेख है परंतु विचार करने पर स्वयं श्रीकृष्ण द्वारा कहा गया गीता का माहात्म्य सबसे अधिक महत्व का तथा प्रेरणावर्धक है। कुछ चुने हुए अठारह श्लोकों का जरा चिन्तन कीजिये।

ये मे मतमिदं नित्यमनुतिष्ठन्ति मानवाः।
श्रद्धावन्तोऽनसूयन्तो मुच्यन्ते तेऽपि कर्मभिः।।
(गीता-३/३१)

जो कोई मनुष्य दोषरहित और श्रद्धायुक्त होकर मेरे इस (गीता में कहे) मत का सदा पालन करता है, वह भी सम्पूर्ण कर्मों से छूट जाता है। भगवान ने ही कर्मों की गति को गहन बताया है, परंतु छूटने का भी सरल उपाय बता दिया।

इमं विवस्वते योगं प्रोक्तवानहमव्ययम्।
विवस्वान्मनवे प्राह मनुरिक्ष्वाकवेऽब्रवीत्।।
(गीता-४/१)

(यह ज्ञान प्राचीनतम है) मैंने इस अविनाशी योग को सूर्य से कहा था, सूर्य ने (अपने पुत्र वैवस्वत) मनु से कहा और मनु ने (अपने पुत्र) राजा इक्ष्वाकु से कहा।

स एवायं मया तेऽद्य योगः प्रोक्तः पुरातनः।
भक्तोऽसि मे सखा चेति रहस्यं ह्येतदुत्तमम्।।
(गीता-४/३)

तू मेरा भक्त और प्रिय सखा है, इसलिये वही यह पुरातन योग आज मैंने तुझको कहा है, क्योंकि यह अति उत्तम रहस्यमय है।

किं कर्म किमकर्मेति कवयोऽप्यत्र मोहिताः।
तत्ते कर्म प्रवक्ष्यामि यज्ज्ञात्वा मोक्ष्यसेऽशुभात्।।
(गीता-४/१६)

कर्म क्या है और अकर्म क्या है? इसका निर्णय करने में कवि (मुर्दे को जिंदा कर देने वाले ज्ञानी पुरुष) भी मोहित हो जाते हैं। वह कर्म तत्त्व मैं तुझे भली भांति समझाकर कहूंगा। जिसे जानकर तू सारे अशुभों से मुक्त हो जायेगा।

मय्यासक्तमनाः पार्थ योगं युञ्जन्मदाश्रयः।
असंशयं समग्रं मां यथा ज्ञास्यसि तच्छृणु।।
(गीता-७/१)

हे पार्थ मुझमें आसक्त चित्त, मुझमें परायण होकर योग में लगा हुआ तू जिस प्रकार से पूर्णरूपेण मुझको संशयरहित जानेगा, उसको मेरे से सुन।

ज्ञानं तेऽहं सविज्ञानमिदं वक्ष्याम्यशेषतः।
यज्ज्ञात्वा नेह भूयोऽन्यज्ज्ञातव्यमवशिष्यते।।
(गीता-७/२)

मैं तेरे लिये इस विज्ञान सहित तत्वज्ञान को सम्पूर्णतया कहूंगा जिसको जानकर संसार में फिर कुछ जानने योग्य शेष नहीं रह जाता। कितनी बड़ी बात भगवान ने गीता के विषय में कही है, कहीं और सुनने को नहीं मिलती। विचार करें।

यदक्षरं वेदविदो वदन्ति विशन्ति यद्यतयो वीतरागाः।
यदिच्छन्तो ब्रह्मचर्यं चरन्ति तत्ते पदं सङ्ग्रहेण प्रवक्ष्ये।।
(गीता-८/११)

हे अर्जुन वेदविद् जिसे अविनाशी कहते हैं, राग शून्य यत्नशील जिसमें प्रवेश करते हैं और जिस परम पद को चाहने वाले ब्रह्मचर्य का आचरण करते हैं उस परमपद को मैं तेरे लिये संक्षेप में कहूंगा।

इदं तु ते गुह्यतमं प्रवक्ष्याम्यनसूयवे।
ज्ञानं विज्ञानसहितं यज्ज्ञात्वा मोक्ष्यसेऽशुभात्।।
(गीता-९/१)

तुझ दोष दृष्टि रहित से इस परम गोपनीय विज्ञान सहित ज्ञान को समझाकर कहूंगा कि जिसको जानकर तू दु:ख रूपी संसार से मुक्त हो जायेगा।

राजविद्या राजगुह्यं पवित्रमिदमुत्तमम्।
प्रत्यक्षावगमं धर्म्यं सुसुखं कर्तुमव्ययम्।।
(गीता-९/२)

यह ज्ञान सब विद्याओं का राजा, गोपनीयों का राजा, परम पवित्र, अति उत्तम, तुरन्त फल देने वाला धर्मयुक्त साधने में सुगम और कभी न नष्ट होने वाला है।

भूय एव महाबाहो श्रृणु मे परमं वच:।
यत्तेऽहं प्रीयमाणाय वक्ष्यामि हितकाम्यया।।
(गीता-१०/१)

हे महाबाहो फिर भी मेरे परम वचनों को सुन, जिसे तुझ प्रेम रखने वाले से हित की इच्छा से कहूंगा।

ये तु धर्म्यामृतमिदं यथोक्तं पर्युपासते।
श्रद्दधाना मत्परमा भक्तास्तेऽतीव मे प्रिया:।।
(गीता-१२/२०)

जो श्रद्धालु मेरे परायण होकर मेरे कहे हुए धर्ममय अमृत का सेवन करेगा वो भक्त मुझको अतिशय प्रिय है।

परं भूय: प्रवक्ष्यामि ज्ञानानां ज्ञानमुत्तमम्।
यज्ज्ञात्वा मुनय: सर्वे परां सिद्धिमितो गता:।।
(गीता-१४/१)

ज्ञानों में अति उत्तम परम ज्ञान को मैं फिर कहूंगा, जिसको जानकर सब मुनिजन इस संसार से मुक्त होकर परम सिद्धि को प्राप्त हो गये हैं।

इदं ज्ञानमुपाश्रित्य मम साधर्म्यमागता:।
सर्गेऽपि नोपजायन्ते प्रलये न व्यथन्ति च।।
(गीता-१४/२)

इस ज्ञान का आश्रय लेकर मेरे स्वरूप को प्राप्त हुए पुरुष सृष्टि के होने पर उत्पन्न नहीं होते और प्रलयकाल में व्याकुल नहीं होते।

इति गुह्यतमं शास्त्रमिदमुक्तं मयानघ।
एतद्बुद्ध्वा बुद्धिमान्स्यात्कृतकृत्यश्च भारत।।
(गीता-१५/२०)

हे निष्पाप अर्जुन यह अति गोपनीय शास्त्र मेरे द्वारा कहा गया, इसको जानकर मनुष्य ज्ञानवान और कृतकृत्य हो जाता है।

य इमं परमं गुह्यं मद्भक्तेष्वभिधास्यति।
भक्तिं मयि परां कृत्वा मामेवैष्यत्यसंशय:।।
(गीता-१८/६८)

जो पुरुष मुझमें परम प्रेम करके इस परम रहस्ययुक्त गीता को मेरे भक्तों में कहेगा वह मुझको ही प्राप्त होगा, इसमें कोई संशय नहीं है।

न च तस्मान्मनुष्येषु कश्चिन्मे प्रियकृत्तम:।
भविता न च मे तस्मादन्य: प्रियतरो भुवि।।
(गीता-१८/६९)

उससे बढ़कर मेरा प्रिय कार्य करने वाला मनुष्यों में कोई भी नहीं है तथा पृथ्वी भर में उससे बढ़कर मेरा प्रिय कार्य करने वाला दूसरा कोई होगा भी नहीं।

अध्येष्यते च य इमं धर्म्यं संवादमावयो:।
ज्ञानयज्ञेन तेनाहमिष्ट: स्यामिति मे मति:।।
(गीता-१८/७०)

जो पुरुष इस धर्ममय हम दोनों के संवाद को पढ़ेगा उसके द्वारा भी मैं ज्ञानयज्ञ से पूजित होऊंगा- ऐसा मेरा मत है।

श्रद्धावाननसूयश्च श्रृणुयादपि यो नर:।
सोऽपि मुक्त: शुभाँल्लोकान्प्राप्नुयात्पुण्यकर्मणाम्।।
(गीता-१८/७१)

जो मनुष्य श्रद्धायुक्त और दोषदृष्टि से रहित होकर इस गीता शास्त्र का श्रवणमात्र भी करेगा, वह भी पापों से मुक्त होकर उत्तम कर्म करने वालों के श्रेष्ठ लोकों को प्राप्त होगा।

इति श्री कृष्णोक्त गीता माहात्म्य

ANNOUNCEMENT

Respected Geeta devotees,

JAI SHREE KRISHNA, JAI GURUDEV

Through December issue of Guru-Prasad you were intimated about the oncoming **117th BIRTHDAY CELEBRATIONS OF OUR MOST REVERED GURUDEV BHAGWAN**, which will take place at Geeta Dham Tinwari, Jodhpur, from March 3-6, 2015. I very well know that you look forward to this very auspicious day which grants you a grand opportunity to pay your special obeisance to your most beloved Gurudev in the company of fellow Geeta devotees, at your Guru's Dham. Leaving behind all your routine worldly affairs, you spare one week time in a year to be at a place, where you are obliged to concentrate on all adhyatmaik affairs and recharge your batteries, as Gurudev used to say.

Dear Geeta devotees, this year we have made some changes in the program which will be more interesting, besides being more enlightening, and more participatory. Number of speeches has been reduced. Thus it will be less taxing for you. Nonetheless you will find the talks from erudite scholars and highly evolved swamis more rewarding.

It gives me great pleasure in mentioning that besides Revered Swami Shree Nityanand Giri Ji Maharaj from famous Kailash Ashram, Rishikesh and Revered Shree Devanshu Goswami Ji Maharaj from Chaitanya Ashram, Vrindavan, we shall have the privilege to hear Padmasri Dr. Kailash Chander Aggarwalji, Head of Narayan sewa Sansthan, Udaipur. They have confirmed their participation in the celebrations and deliver pravachans on Geeta philosophy. All of them have travelled extensively abroad and have been delivering pravachans, which have kept the audience spell-bound. Shree Devanshu Goswami Ji Maharaj has also consented to participate in the evening satsangs on 3rd and 4th and will be delivering talks based on Bhagvat katha. This has specially been arranged so that Lord's message is conveyed through katha, which is more easily understood.

VERY SPECIAL PROGRAM:

On the 5th morning from 10.00 to 10.45 am you will have the rare opportunity to hear very clearly (an audio-tape) **PRAVACHAN BY HIS HOLINESS SHREE 1008 SWAMI HARIHARJI MAHARAJ, OUR MOST REVERED GURUDEV.** I am sure you all will be thrilled to hear him in his own grand style. The message given by him through this pravachan is very enlightening, to say the least.

As for Laddoo Bhog for Lord Shree Hanumanji this year we have planned so that participating devotees will be provided thali with laddoo and a lamp, so that they can offer laddoo after each chaupai (one round with samput paath) themselves. This will be held in the afternoon on the 5th March. The same evening at 7.15 PM there will be HOLIKA DAHAN.

As usual, on the last day (6th March) there will be **SAMPPOORN GEETA HAVAN, GURU-PADUKA POOJAN FOLLOWED BY HOLI CELEBRATIONS AND PATOTSAVA AT SHREE HARI HARESHWAR MAHADEV TEMPLE.**

Along with birthday celebrations we also hold International Geeta conference. This year it will be the 28th one. The theme of the conference this year is: **BHAKTI KE DWARA SIDHHI-PRAAPTI: GEETA KI DRISHTI SE (ATTAINMENT OF PERFECTION ACCORDING TO GEETA).**

In addition to all the above mentioned activities we are arranging for Yoga sessions to be conducted by one of the most respected Gurudev's disciples, (Shree Maliji from Geeta Ashram, Jath) well proficient as YOGA-TEACHER on 4th & 5th morning. In the late evenings there will be Variety entertainment, Bhajan-Sandhya, and Ek shaam Gurukul ke naam, a presentation by our own students at Gurukul Geeta Dham .

Registration charges, as usual will include BOARD & LODGING (from March 3 to 7) and transport will be provided on the 3rd March from Jodhpur airport+railway station to Dham and for return, on the 6th & 7th from Dham to Jodhpur. Delegates travelling from Delhi by rail may consider leaving Delhi on the 2nd March by Delhi-Jaisalmer Intercity Express (Train no: 14659) which leaves Old Delhi Railway station at 17.35 hrs and arrives Tinwari Railway station at 7.15 hrs the following day. On return they could take Jaisalmer-Delhi Intercity Express which leaves Tinwari at 21.00hrs and arrives Delhi at 11.10 hrs the following day. Transport will be available both ways.

ALL ARE WELCOME

With best wishes FOR A HAPPY, PROSPEROUS AND PEACEFUL NEW YEAR,

Yours, in the service of Guru, Geeta and Gopal,

Professor Dr. U. Prasad

President, Apex Body Geeta Ashram / Geeta Dham

NOTICE

Respected Hon'ble Members & Trustees,

JAI SHRI KRISHAN, JAI GURUDEV,

This is to bring to your kind notice that the Magh Mela Camp at Allahabad is being organized by Geeta Ashram International Headquarters, Delhi Cantt., New Delhi-110010 with effect from 01.01.2015 to 06.02.2015 under the kind guidance of Revered Swami Brahmanand ji Maharaj, Supreme Spiritual Head.

Accordingly, we request all the Hon'ble Members and Trustees of Geeta Ashram and Geeta Dham Trust to spare their valuable time to attend the Magh Mela Camp for "Holy Bath" at Sangam for which we will feel extremely grateful to you.

Thanking you and with kind regards,

Yours in the Service of Guru, Geeta and Gopal

(G.K. Wattal)

Hony General Secretary

आश्रम समाचार

गीता आश्रम मुख्यालय, दिल्ली कैंट

परम पूज्य सद्गुरुदेव भगवान की महती कृपा से आश्रम का कार्य सुचारु रूप से प्रगति पथ की तरफ चल रहा है। दिनांक ४ दिसम्बर को स्वामी गुरु मां जी भक्तगणों के साथ गाजियाबाद भाई उमाकान्त बजाज एवं बहन सुषमा बजाज जी के निवास स्थान पर पधारीं। जहां पर उन्होंने गीता जी के द्वादश अध्याय का पाठ किया एवं राम मंदिर में महिला सत्संग आयोजित किया गया था। जहां पर गुरु मां जी ने द्वादश अध्याय का पाठ, गीता आरती एवं गीता जी की महिमा की व्याख्या की। दिनांक ६ दिसम्बर को स्वामी गुरु मां जी ने मुम्बई के लिये प्रस्थान किया। वहां का कार्य सम्पन्न करके स्वामी गुरु मां जी दिनांक ७.१२.२०१४ को दिल्ली वापिस लौटीं। दिनांक १६ दिसम्बर को स्वामी गुरु मां जी ने दुबई के लिए प्रस्थान किया। वहां पर कार्य सफलतापूर्वक सम्पन्न करके दिनांक २३.१२.२०१४ को दिल्ली पधारीं। दिनांक ९.१२.२०१४ को पं. अमरनाथ उपाध्याय, पं. अभिषेक उपाध्याय जी द्वारा गाजियाबाद में भाई मनीष शर्मा जी, बहन दीपु शर्मा जी के निवास स्थान पर सम्पूर्ण गीता यज्ञ किया गया। दिल्ली आश्रम में प्रत्येक रविवार सत्संग आयोजित किया जाता है।

गीताधाम तिंवरी, जोधपुर

नित्य कार्यक्रम- परम् पूज्य गुरुदेव की कृपा एवं आशीर्वाद से गीताधाम के सभी नित्य कार्यक्रम सुचारु रूप से चल रहे हैं। प्रातः ५.३० बजे शंखनाद से प्रारम्भ होकर भगवान श्री राधाकृष्ण की मंगला आरती एवं सभी मन्दिरों में आरती पूजन, द्वादश अध्याय, तीन अध्याय का पाठ, गीता आरती, हनुमान चालीसा पाठ एवं माखन मिश्री का प्रसाद वितरण होता है।

सुबह ६.१० बजे गुरुकुल विद्या मन्दिर (छात्रावास) के बच्चों द्वारा नित्य द्वादश अध्याय के मंत्रों द्वारा गीता यज्ञ किया जाता है। प्रत्येक सोमवार को श्री हरिहरेश्वर महादेव मन्दिर में पूर्ण विधि विधान सहित रूद्राभिषेक पं. जगदीश वाजपेयी के आचार्यत्व में भक्तों द्वारा नियमित किया जाता है। संध्या वेला ६.०० बजे से संध्या आरती, सम्पुट वल्ली पाठ, हनुमान चालीसा पाठ, श्लोक का भावार्थ, भजन-कीर्तन एवं शयन आरती एवं प्रसाद वितरण के साथ रात्रि ७.३० बजे सम्पन्न होता है।

गीता जयन्ती महोत्सव एवं समापन- दिनांक १५.११.२०१४ से आरम्भ हुई १८ दिवसीय गीता जयन्ती महोत्सव मनाया गया इस अवधि में हर रोज किसी न किसी स्थान या भक्तों के निवास या खेत में सम्पूर्ण गीता यज्ञ श्री शान्तिस्वरूपजी कल्ला के आचार्यत्व में किया जा रहा है। प्रथम दिन दिनांक १५.११.१४ को गीताधाम में यज्ञ सम्पन्न किया गया मुख्य यजमान शिकागो (अमेरिका) से पधारे हुए गुरुदेव के अनन्य शिष्य श्रीमति सुशीला जी एवं श्री हरीश जी बोहरा रहे एवं श्री मुरलीधर जी जोशी एवं श्रीमती पुष्पा जी जोशी सह यजमान रहे। दूसरे दिन दिनांक १६.११.२०१४ को श्री मुरलीधर जी एवं श्रीमती पुष्पाबहनजी जोशी ने मुख्य यजमान के रूप सम्पूर्ण गीता यज्ञ गीताधाम में ही सम्पन्न करवाया। तत्पश्चात् अलग-अलग गांवों में भक्तों के निवास स्थानों पर यज्ञ सम्पन्न किये गये। अन्तिम दिन दिनांक २ दिसम्बर २०१४ को सम्पूर्ण गीता यज्ञ गीताधाम में ही १८ कुण्डीय यज्ञशाला में सम्पन्न किया गया। जिसमें गांव-गांव से व जोधपुर से भक्तगणों ने धाम में आकर यज्ञ में आहुतियां देकर पुण्य कमाया। यज्ञ के पश्चात् गुरुचरण पादुका पूजन व आरती की गई तत्पश्चात् सभी भक्तों ने भोजन प्रसादी प्राप्त की। जितने भी भक्त इस अवसर पर उपस्थित हुए सभी ने धाम में ही भोजन प्रसादी प्राप्त की व मानसिक सुख एवं शान्ति का अनुभव किया। जयन्ती अवधि में गुरुकुल के छात्रों द्वारा प्रति दिन प्रातः ६ बजे से प्रभात फेरी निकाली जाती थी। गीताधाम के अन्दर परिक्रमा कर सभी छात्र श्री राधाकृष्ण मन्दिर पहुंचकर गीताजी का १२वां अध्याय

का पाठ व हनुमान चालीसा का पाठ करते थे बाद में प्रसाद पाकर गुरुकुल के लिये प्रस्थान करते थे। सभी दिन गीता हवन श्री शान्तिस्वरूप जी कल्ला के आचार्यत्व में सम्पन्न हुए श्री प्रकाशजी पुरोहित, दाउलालजी बोडा व केशवराज जी जोशी ने सहयोग किया।

संकटहरन् हनुमान जी को १००८ लड्डुओं का भोग- हर पूर्णिमा की भांति इस पूर्णिमा दिनांक ६ दिसम्बर २०१४ को भी गीताधाम में प्रतिष्ठित संकटहरन् हनुमान जी को १००८ लड्डुओं का भोग लगाया गया। जिसमें मुख्य यजमान गीताधाम के समीप कृषि का कार्य करने वाले कृषक श्री किशनाराम जी सांखला एवं श्रीमती चुन्नी देवी निवासी बडाकोटेचा रहे। गुरुकुल के छात्रों द्वारा हनुमान चालीसा की पांच आवृत्तियों में पाठ किया गया। आरती के बाद प्रसाद वितरण किया गया। इस दौरान यजमान परिवार के सदस्य, धाम के कर्मचारी एवं सहयोगी भक्त उपस्थित थे।

धाम में श्रीमद्‌भागवत सप्ताह का आयोजन- १४ दिसम्बर से २२ दिसम्बर २०१४ तक धाम की गौशाला के विकास, गौ सेवार्थ के सहयोग एवं स्थानीय भक्तों के लिये धार्मिक वातावरण के लिये गुरुदेव स्वामी हरिहर जी महाराज के आशीर्वाद से धाम के प्रशासक श्री प्रकाश जी पुरोहित एवं धाम के गुरुभक्तों ने धाम में श्रीमद्‌भागवत सप्ताह का आयोजन करवाया। जो दिनांक १४ दिसम्बर २०१४ से २२ दिसम्बर २०१४ तक चला। भागवत सप्ताह को गुरुदेव के अनन्य शिष्य पू. स्वामी श्री मुक्तानन्द जी महाराज के सान्निध्य में कथावाचक पू. स्वामी गीता मातेश्वरी जी द्वारा सम्पन्न की गई।

प्रथम दिवस- दिनांक १४ दिसम्बर २०१४ को दोपहर १.१५ बजे गीताधाम के पास स्थित श्री रामप्रसादजी संत के आश्रम में भागवत महापुराण की मन्दिरों में पूजन करके भागवत महापुराण को प्रशासक श्री प्रकाश जी पुरोहित ने अपने सिर पर रखकर यात्रा को प्रारम्भ किया। जिसमें सभी भक्तों ने अपने सिर पर रखकर भागवत महापुराण को गीताधाम में स्वामी श्री मुक्तानन्द जी महाराज के सान्निध्य में महिला मण्डल सदस्यों एवं धाम के आवासी सदस्य एवं बालिकाओं एवं फरीदाबाद से पधारे भक्तों के द्वारा कलश लेकर गीताधाम में स्थित श्री राधाकृष्ण सरोवर मन्दिर तक शोभा यात्रा निकाली। इस यात्रा में प्रशासक श्री प्रकाश पुरोहित, श्री केशवराज जी जोशी, श्री शान्तिस्वरूप जी कल्ला, श्री निरंजन कुमार जी एवं धाम के समस्त कर्मचारी उपस्थित रहे।

श्री राधाकृष्ण मन्दिर में प्रशासक महोदय ने गुरुदेव हरिहर जी महाराज की पूजा करके पू. स्वामी श्री मुक्तानन्द जी महाराज एवं स्वामी गीता मातेश्वरी जी को माल्यार्पण किया। तत्पश्चात् उपस्थित भक्तों के समक्ष कथा वाचन प्रारम्भ किया गया। सप्ताह का समय- सप्ताह को प्रतिदिन प्रात: १० बजे से दोपहर २ बजे तक आयोजन किया गया। भागवत सप्ताह में भावनात्मक प्रसंग के सुन्दर सुन्दर मनमोहक संगीतमय भजन व आरतीयों को प्रस्तुत किया, जिसका सभी भक्तों ने आनन्द एवं उत्साह के साथ लाभ उठाया। भक्तों ने दिल खोलकर नृत्य किया एवं मनमोहक भजन प्रस्तुत किये। सर्दी का मौसम होने के बावजूद प्रतिदिन सैंकड़ों भक्तों ने कथा सप्ताह श्रवण का लाभ प्राप्त किया।

व्यवस्था- श्री राधाकृष्ण मन्दिर में सप्ताह के दौरान भक्तों को सर्दी से बचने के लिये सभी जगह टैन्ट की व्यवस्था की गई। सप्ताह में भक्तों को लाने एवं छोड़ने की धाम की ओर से नि:शुल्क बस व्यवस्था की गई। सप्ताह कार्यक्रम में फरीदाबाद एवं जोधपुर से पधारे सभी भक्तों के लिये गेस्ट हाउस में रहने की व्यवस्था की गई तथा भोजनशाला में प्रात: ७ बजे नाश्ता, दोपहर २ बजे भोजन प्रसादी, सायं ४ बजे चाय एवं रात ८ बजे भोजन प्रसादी की व्यवस्था की गई। साथ ही रात में भक्तों के लिये गेस्ट हाउस में टैन्ट हॉल लगाकर रात ९ बजे से १२ बजे तक भजन कीर्तन कार्यक्रम का लाभ प्राप्त किया गया। धाम के कर्मचारियों एवं सदस्यों ने पधारे भक्तों के लिये अधिक से अधिक सुविधा व सहयोग दिया।

इस सप्ताह कार्यक्रम में पधारे भक्तों के लिये निःशुल्क व्यवस्था की गई।

सहयोग एवं कार्यक्रम- गीता सप्ताह कार्यक्रम के दौरान पू. स्वामी मुक्तानन्द जी महाराज एवं पू. स्वामी गीता मातेश्वरी जी ने रूद्राक्ष का वृक्षारोपण किया। सप्ताह के दौरान एकादशी के दिन गीता आश्रम, जोधपुर से पधारे भक्तों की ओर से सप्ताह में पधारे सभी भक्तों एवं कर्मचारियों एवं हॉस्टल के विद्यार्थियों के लिये गाजर का हलवा एवं दाल के पकौड़े की प्रसादी दी तथा पू. स्वामी श्री मुक्तानन्द जी एवं पू. स्वामी गीता मातेश्वरी जी द्वारा प्रशासक श्री प्रकाश पुरोहित, श्री दाउलाल बोडा को साफा पहनाकर सम्मानित किया गया। मंगलवार के दिन गीताधाम में परिसर में स्थित श्री हनुमान मन्दिर में सभी भक्तों ने स्वामी जी के सान्निध्य में श्री हनुमान चालीसा का १०८ बार पाठ किया। शनिवार को श्री हनुमान मन्दिर में १००८ लड्डुओं का भोग लगाया जिसमें कोई भी एक यजमान न होकर सभी उपस्थित भक्तों ने हनुमान जी को भोग में अपना सहयोग दिया।

कथा का समापन- दिनांक २० दिसम्बर २०१४ को सप्ताह के अन्तिम दिन आस-पास से पधारे भक्तों ने भाग लिया। मन्दिर के परिसर में अपार भीड़ के साथ कथा के अन्तिम भाग को बताया गया। अंत में स्वामी मुक्तानन्द जी महाराज ने भक्तों को गौ सेवा के लिये सहयोग एवं उसका महत्व बताया। अन्त में पुष्पों की होली का आयोजन किया गया जिसमें सभी उपस्थित भक्तों ने भाग लिया। सभी भक्तों को बसों के द्वारा अपने गंतव्य स्थान पर छोडा गया।

हवन- दिनांक २१ दिसम्बर २०१४ को १८ कुण्डीय स्थल यज्ञ की आहुतियां दी गई जिसमें स्थानीय भक्तों एवं जोधपुर एवं फरीदाबाद से पधारे भक्तों ने इसका पुण्य कमाया। जिसमें आचार्यात्व पू. स्वामी मुक्तानन्द जी महाराज एवं पू. स्वामी गीता मातेश्वरी जी रहे।

स्वामी जी एवं भक्तों का आगमन व प्रस्थान- स्वामी श्री मुक्तानंद जी महाराज एवं स्वामी गीता मातेश्वरी जी का दिनांक १२ दिसम्बर २०१४ को ३.३० बजे गीता धाम पधारने पर कर्मचारियों एवं सदस्यों ने भव्य स्वागत किया। दिनांक २१ दिसम्बर २०१४ को धाम से फरीदाबाद के लिये प्रस्थान किया। फरीदाबाद से पधारे भक्तों के लिये जोधपुर से लाने एवं दिनांक २२ दिसम्बर २०१४ को पुनः जोधपुर स्टेशन पर छोडने की व्यवस्था की गई थी।

गुरूकुल विद्या मन्दिर में शीतकालीन अवकाश- गुरुकुल विद्या मन्दिर में दिनांक १४ दिसम्बर २०१४ से २२ दिसम्बर २०१४ तक सभी कक्षाओं के अर्द्धवार्षिक परीक्षा होने के पश्चात् दिनांक २५ दिसम्बर २०१४ से १ जनवरी २०१५ तक गुरुकुल में शीतकालीन अवकाश होने से हॉस्टल के सभी छात्र अपने परिजनों के साथ छुट्टियों का आनन्द लेने के लिये अपने-अपने घरों को चले गये।

शिकागो अमेरिका निवासी श्री हरीश जी व श्रीमती सुशीला जी बोहरा का धाम में प्रवास एवं सहयोग- गुरुदेव के अनन्य शिष्य श्री हरीश जी बोहरा एवं धर्मपत्नी श्रीमती सुशीला जी बोहरा शिकागो से पधारे एवं धाम में रहने से धाम में सभी धार्मिक एवं अन्य कार्यों में अपना सहयोग देते रहते हैं।

गीता आश्रम फरीदाबाद

परम पूज्य गुरुदेव भगवान की अपार कृपा से यहां का सम्पूर्ण कार्य सुचारु रूप से चल रहा है।

चंडीगढ़ में गीता-सप्ताह सम्पन्न करते हुए पूज्य स्वामी मुक्तानन्द जी व गीता मातेश्वरी जी दिनांक ७.१२.२०१४ को फरीदाबाद वापिस पधारे। गीता-जयंती के उपलक्ष में यह गीता-सप्ताह बहुत ही धूमधाम से मनाया गया। इस बार गीता मातेश्वरी जी ने गीता के प्रथम अध्याय पर ही प्रकाश डाला। अंतिम दिन सम्पूर्ण गीता जी का विलोम यज्ञ कराया गया। पू. स्वामी जी के आदेशानुसार नित्यप्रति वहां के पंडित जी मंदिर में द्वादश अध्याय का पाठ करते हैं व लोगों को सिखाते हैं, इससे बहुत सारे भक्तों को द्वादश अध्याय पढ़ना आ गया है व कण्ठस्थ भी है। इस

दौरान डाकोली व खरड़ में भी भक्तों के घर पर गीता-पाठ किया व पंचकुला में गीता जी का हवन किया गया।

फरीदाबाद के दोनों आश्रमों में १८ दिन की गीता-जयंती मनाई गई, जिसकी पूर्णाहुति गीता यज्ञ के द्वारा दिनांक ९.१२.२०१४ को की गई। गीता मां का मूर्ति-स्थापना दिवस भी मनाया गया। गीता आश्रम नं. २ में गीता जयंती महोत्सव दिनांक १०. १२.२०१४ को धूमधाम से मनाया गया।

पू. स्वामी मुक्तानंद जी व स्वामी गीता मातेश्वरी जी ने दिनांक १२.१२.२०१४ को गीताधाम के लिए प्रस्थान किया। गुरुदेव भगवान की कृपा से प्रथम बार गीताधाम में गीता-सप्ताह का आयोजन किया गया। जोधपुर एयरपोर्ट पर श्री प्रकाश पुरोहित जी अन्य भक्तों सहित फूल-मालाओं के साथ दोनों संतों का हार्दिक अभिनंदन कर उन्हें गीताधाम लेकर गये। गीता धाम में भी सभी भक्तों ने उनका फूल-मालाओं के साथ स्वागत किया।

दिनांक १३.१२.२०१४ को प्रात: १०.०० बजे शंकर भगवान के मंदिर के पास दोनों संतों के कर-कमलों द्वारा रुद्राक्ष का वृक्ष लगाया गया। द्वादश अध्याय का पाठ व विधिवत पूजन किया गया। तत्पश्चात् श्रीराधाकृष्ण मंदिर में सम्पूर्ण गीता यज्ञ हुआ, जिसमें मुख्य यजमान शिकागो यूएसए से पधारे श्री हरीश वोहरा जी व श्रीमती शीला वोहरा जी थे।

दिनांक १४.१२.२०१४ को दोपहर २.०० बजे कलश यात्रा निकाली गई व ३.०० बजे से गीता मां का पूजन कर गीता सप्ताह ज्ञान-यज्ञ प्रारम्भ किया गया। अगले दिन से नित्यप्रति प्रात: १०.३० बजे से २.३० बजे तक बहुत ही सुंदर ढंग से सत्संग चलता रहा। ज्ञान चर्चा के साथ-साथ गीता मातेश्वरी जी ने अपने मधुर- मधुर भजनों द्वारा भी भक्तों को निहाल किया।

दिनांक २१.१२.२०१४ को यज्ञशाला में सम्पूर्ण गीता यज्ञ (विलोम) गीता मातेश्वरी जी द्वारा करवाया गया। १८ हवन कुण्डों पर बैठकर सभी भक्तों ने भाग लिया। तत्पश्चात श्रीराधा-कृष्ण मंदिर में फूलों की होली खेली व सभी भक्तों ने नाचते-झूमते हुए अलौकिक आनन्द का अनुभव किया। गुरु-गीता-गोपाल की जय-जयकार से गीताधाम गूंज उठा। इस सप्ताह में मुख्य यजमान श्रीमती शीला-हरीश वोहरा जी, प्रकाश पुरोहित जी, शांति स्वरूप कल्ला तथा पुष्पा जी व मुरली जी रहे। इनके अलावा फरीदाबाद, दिल्ली, जोधपुर, तिंवरी व अन्य गांव से भी भक्तजन पधारे।

इस दौरान मंगलवार को हनुमान जी के मंदिर में पू. स्वामी मुक्तानन्द जी ने हनुमान चालीसा के १०८ पाठ तुलसी-दल के साथ करवाये व शनिवार को १००८ लड्डुओं का भोग समर्पित करते हुए पाठ किये गये। गीता धाम में सभी ने बहुत ही प्रेम दिखाया व सेवा की। फरीदाबाद से लगभग ४० भक्तजन गीता धाम पधारे। दिनांक १४.१२.२०१४ से २१.१२.२०१४ तक बहुत ही सुंदर ढंग से गीता सप्ताह सम्पन्न हुआ। दिनांक २१.१२.२०१४ को सम्पूर्ण गीता यज्ञ के उपरांत दिनांक २२.१२.२०१४ को पू. स्वामी जी, मातेश्वरी जी व सभी भक्तजन वापिस फरीदाबाद पधार गये।

दिनांक ४.१.२०१५ से ११.१.२०१५ तक पू. स्वामी मुक्तानन्द जी व स्वामी गीता मातेश्वरी जी का करनाल में प्रथम बार गीता-सप्ताह का कार्यक्रम है।

फरीदाबाद के दोनों आश्रमों में लोहड़ी व मकर-संक्रांति का पर्व मनाया जायेगा। तत्पश्चात दिनांक २१.१.२०१५ से ३१.१.२०१५ तक उनका कार्यक्रम बड़ौदा में है। वहां गीता भवन में हर वर्ष की भांति गीता-सप्ताह का आयोजन है।

नववर्ष की सभी गुरु परिवार को बहुत-बहुत हार्दिक बधाई व शुभकाकामनाएं।

गीता आश्रम, सिंघोड़ों की बारी, किला रोड, जोधपुर

व्यवस्थापक ओमदत्त पणिया ने बताया कि गुरुदेव की असीम कृपा से गीता आश्रम सिंघोड़ों की बारी, किला रोड, जोधपुर में गीता पाठ, नित्य-सप्ताहित व मासिक सत्संग व गोष्ठी होती रहती हैं।

नित्य सत्संग में ग्यारह भजन गाये जाते हैं,

हनुमान चालीसा, कृष्ण चालीसा पाठ, आरती भक्तों द्वारा गाये जाते हैं तदुपरान्त प्रसाद वितरण किया जाता है। गीता जी के १२ व १५ अध्याय का लघु यज्ञ किया जाता है। आरती व प्रसाद वितरण के बाद भक्तगण प्रस्थान करते हैं।

सप्ताहिक सत्संग में भजनों का कोई बन्धन नहीं होता जिससे लघु यज्ञ भी हो जाता है। गीता जयन्ती समारोह के तत्वावधान में कुछ भक्तों के निवासस्थान पर गुरुदेव के रूप में स्वामी श्रेयानन्द जी महाराज उपस्थित हुए उन्होंने अपनी मधुर वाणी से वचनामृत की गंगा बहाकर भक्तों को कृतार्थ किया। उद्‌गम-धाम श्री छंवरलाल पणिया, मधुसुदन व्यास, श्री गोविन्द जी व्यास, श्री कृष्ण व्यास, श्री जगदत्त पणिया, अवतार किशन बोहरा, श्री सुरेश थानवी, श्री जगन्नाथ आदि।

गीता जयन्ती के दिन प्रभात फेरी निकाली गई। जो पुष्टिकर स्कूल से प्रस्थान कर जालप मौहल्ला, बनिया बाडा, कल्लो की गली, पूरा मौहल्ला, तापी बावड़ी, भीम जी की हथाई, बोहरों की पोल, गंग-श्यामजी मन्दिर, बाल किशन जी का मन्दिर उद्‌गम-धाम होते हुए, गीता मौहल्ला, गीता ग्रन्थालय में गीता पाठ, आरती व प्रसाद वितवण कर समाप्त हुई।

ठीक शाम ५ बजे पूर्ण गीता यज्ञ गीता आश्रम सिघोंड़ो की बारी में प्रारम्भ हुआ जिसमें मुख्य यजमान श्री सुरेश जी पुरोहित तथा मुख्य वाचक सुरेश थानवी थे। सैंकड़ों भक्तों ने गीता यज्ञ में आहुतियां दीं। स्वामी श्रेयानन्द जी ने अपने मधुर वचनामृत से भक्तों को कृतार्थ किया। सभी भक्तों ने प्रसादी ग्रहण की और जयघोष के साथ प्रस्थान किया। पुष्य नक्षत्र के दिन गीतेश्वर महादेव लिंग पर दुग्ध-अभिषेक श्री विजय कान्त, मधुसुदन, प्रमोद जगदत्त पणिया, हरीश पणिया, अंकित छंगाणी, केशव थानवी, धर्मेन्द्र पुरोहित, राजेन्द्र पुरोहित, छेनका आदि वाचक रहे।

आश्रम की प्रगति निरन्तर हो रही है जिसके लिये श्री विजयकान्त, श्री प्रमोद पुरोहित, श्री मधुसुदन व्यास, श्री अवतार किशन बोहरा, श्री मुरली बोहरा, श्री इन्द्र प्रकाश जोशी, श्री जगदत पणिया, श्री अशोक भासा (नू), श्री नन्दू रामदेव चौधरी, अश्वनी आदि का सहयोग प्राप्त हो रहा है। स्वामी श्रेयानन्द जी स्वर्गीय पुष्पचन्द्र जी व स्व. आनन्द किशन बोहरा के निवास स्थान भी गये क्योंकि इन दोनों का स्वर्गवास हो गया था। पू. स्वामी जी ने इनके परिवारवालों को संवेदना दी तथा इस दु:खान्त समय में सांत्वना प्रकट की।

गीता आश्रम कल्याणी नगर, पूना

प्रत्येक वर्ष की भांति इस वर्ष भी गीता जयंती का वार्षिकोत्सव बड़ी धूमधाम से कल्याणी नगर, पूना में सम्पन्न हुआ। कार्यक्रम की प्रभारी ने बड़े सुनियोजित ढंग से यहां सामूहिक हवन का आयोजन किया। लगभग आठ वेदियां बनाई गईं, जिन पर मुख्य सदस्याओं ने श्री गीता के श्लोकों द्वारा हवन करवाया। सम्पूर्ण गीता का वाचन हुआ तथा मंत्रोच्चारण से समस्त वातावरण पावन हो गया। प्रत्येक वेदी पर ७-८ महिलाएं आहुति डालने एवं गीतापाठ करने के लिये तत्पर थीं। मुख्य पीठासन पर विराजमान थीं जिनके संरक्षण में विधि-विधान से हवन सम्पन्न हुआ। हवन प्रातः १० बजे प्रारम्भ हुआ एवं दोपहर १२.३० बजे तक सम्पूर्ण हुआ। तत्पश्चात मंत्रों के उच्चारण उच्चध्वनि में किए गए। महिलाओं द्वारा कृष्ण भजन गाए गये। गीताप्रेमियों का उत्साह देखने योग्य था। हवन के समय सभी बड़ी तत्परता से किसी न किसी तरह सहयोग दे रहे थे। कोई घूम-घूमकर समिधा पहुंचा रहा था तो कोई घी और सामग्री। श्रीकृष्ण की सुंदर सी झांकी भी सजाई गई थी।

कार्यक्रम के अंत में भोजन का आयोजन था एवं प्रसाद वितरण कर सभी गीताप्रेमियों को आनन्द से विदा किया गया। इस सम्पूर्ण कार्यक्रम के अन्तर्गत गीताप्रेमियों की सहयोग, कर्तव्य परायणता, परिश्रम तथा परस्पर प्रेम की भावना मुखरित हो रही थी जो गीता का महामंत्र है- कर्म। इस सद्‌कर्म से पूनावासियों ने प्रदर्शित कर दिया कि गीता केवल धार्मिक पुस्तक नहीं उनके मनसा, वाचा, कर्मणा में निहित है।

राशिफल

14 जनवरी से 13 फरवरी 2015 तक

मेष चू, चे, चो, ल, ली, लू, ले, लो, अ
नया लेन-देन सावधानी से करें, घरेलू झंझटों के कारण मन अशांत रहेगा, सरकारी कार्यों में तथा स्त्री पक्ष से लाभ के योग, भाई बन्धुओं से सहयोग प्राप्त होगा।

वृष ई, ऊ, ए, ओ, बा, बी, बु, बे, बो
मित्रों का सहयोग प्राप्त होगा, स्वास्थ्य संबंधी समस्याओं के कारण परेशानी हो सकती है, धन लाभ के योग, वृथा व्यय से बचें, संतान की तरफ से शुभ समाचार की प्राप्ति।

मिथुन क, की, कु, घ, ड़, छ, के, को, ह
नौकरी व कारोबार में तरक्की के योग, गुप्त चिंता से मन परेशान रहे, पेट में तकलीफ हो सकती है, खानपान पर विशेष ध्यान दें, अचानक धनलाभ के योग।

कर्क ही, हू, हे, हो, डा, डी, डू, डे, डो
नौकरी व व्यवसाय में परिवर्तन के योग, स्वास्थ्य लाभ हो, उच्च प्रतिष्ठित लोगों से मेलजोल बढ़ेगा, विरोधी पक्ष कमजोर रहे।

सिंह मा, मी, मू, मे, मो, ट, टी, टू, टे
आर्थिक स्थिति अच्छी रहेगी, कफ विकार के कारण परेशानी हो सकती है, व्यवसाय में प्रगति के योग, सन्तान पर धन का विशेष व्यय हो, स्त्री पक्ष से लाभ।

कन्या टो, प, पी, पू, ष, ण, ठ, पे, पो
मन काफी प्रफुल्लित रहेगा, धन लाभ के अवसर प्राप्त होते रहेंगे, स्वास्थ्य लाभ, कार्यस्थल में स्थान परिवर्तन से लाभ, गुप्त शत्रु से सावधान रहें।

तुला रा, री, रु, रे, रो, ह, त, ती, तू, ते
कठिनाइयों के पश्चात कारोबार में लाभ के योग, सेहत ठीक रहे, राजदरबार से लाभ, संतान की ओर से मन परेशान रहे, पारिवारिक चिंता के कारण परेशानी रहे।

वृश्चिक तो, ना, नी, नू, ने, या, यी, यू
नौकरी व व्यवसाय में लाभ के अवसर प्राप्त होंगे, व्यर्थ के झगड़ों में ना उलझें, मित्रों व सगे-संबंधियों का सहयोग प्राप्त होगा।

धनु ये, यो, भा, भी, भू, धा, फा, ढ, भे
आपसी वाद-विवाद के कारण मन परेशान रहे, कारोबार की स्थिति अच्छी रहेगी, पेट का ख्याल रखें, चोरी का भय।

मकर भो, ज, जी, जे, खी, खू, ग, गी
अकस्मात धन लाभ के योग, मित्रों का सहयोग प्राप्त होगा, धार्मिक यात्रा के योग, सोची हुई योजनाएं पूर्ण होंगी, मन प्रफुल्लित रहे।

कुम्भ गु, गे, गो, सा, सी, सू, से, सो, दा
धार्मिक कार्यो की ओर रूचि बढ़े, कारोबार में धन लाभ के योग, विरोधी पक्ष प्रबल रहे, संतान की चिंता के कारण मन परेशान रहे।

मीन दी, दू, थ, झ, दे, दो, चा, ची
नौकरी व व्यवसाय में परिवर्तन के योग, कारोबार प्रगतिशील रहे, रूके व बिगड़े काम पूरे होंगे, मानसिक चिंता रह सकती है।

ज्योतिर्विद- सत्यपाल शर्मा

एम.एस.सी. (फिजिक्स) ज्योतिर्विज्ञान केन्द्र

Mobile : 09560089575 ● e-mail : daivagya@hotmail.com

व्रत/त्योहार सूची

14 जनवरी से 13 फरवरी 2015 तक

उत्तर गोल / उत्तरायण / शिशिर ऋतु

क्र.स.	व्रत/पर्व	दिनांक	वार
१.	मकर संक्रांति	१४-१-२०१५	बुधवार
२.	माघ कृष्ण एकादशी व्रत	१६-१-२०१५	शुक्रवार
३.	माघ कृष्ण प्रदोष व्रत	१८-१-२०१५	रविवार
४.	माघ मासिक शिवरात्रि व्रत	१८-१-२०१५	रविवार
५.	माघ मौनी अमावस्या	२०-१-२०१५	मंगलवार
६.	गौरी तृतीया	२२-१-२०१५	गुरुवार
७.	श्री सिद्धिविनायक चतुर्थी व्रत	२३-१-२०१५	शुक्रवार
८.	वरद-तिल-कुन्द चतुर्थी	२३-१-२०१५	शुक्रवार
९.	श्री पंचमी, वसन्त पंचमी	२४-१-२०१५	शनिवार
१०.	सरस्वती व लक्ष्मी पूजन	२४-१-२०१५	शनिवार
११.	रथ सप्तमी, आरोग्य सप्तमी	२६-१-२०१५	सोमवार
१२.	भीष्माष्टमी	२७-१-२०१५	मंगलवार
१३.	माघ मासिक दुर्गाष्टमी व्रत	२७-१-२०१५	मंगलवार
१४.	माघ शुक्ल एकादशी व्रत	३०-१-२०१५	शुक्रवार
१५.	माघ शुक्ल प्रदोष व्रत	१-२-२०१५	रविवार
१६.	माघ पूर्णिमा व्रत	३-२-२०१५	मंगलवार
१७.	माघ स्नान समाप्त	३-२-२०१५	मंगलवार
१८.	फाल्गुन कृष्ण गणेश चतुर्थी व्रत	७-२-२०१५	शनिवार
१९.	मासिक कालाष्टमी व्रत	१२-२-२०१५	गुरुवार

पंचक प्रारम्भ : गुरुवार, २२-१-२०१५

पंचक समाप्त : सोमवार, २६-१-२०१५

निदेशक : **पं. गौरीदत्त शर्मा ज्योतिर्विद** (गीता रत्न)

(श्रीमद्‌भागवत आदि पौराणिक कथावाचक)

ज्योतिष विज्ञान केन्द्र, गीता आश्रम, सदर बाजार,

दिल्ली कैन्ट, दिल्ली-110010

फोन नं. 011-25683558, मोबाइल 09418551441

e-mail : daivagya@gmail.com

मेकिन उरानन स्कालरशिप फंड

गीता आश्रम, थाईलैंड, बैंकाक

यज्ञदानतपः कर्म न त्याज्यं कार्यमेव तत्।
यज्ञो दानं तपश्चैव पावनानि मनीषिणाम्॥

यज्ञ, दान और तपरूप कर्म त्याग करने के योग्य नहीं, बल्कि वह तो अवश्य कर्तव्य हैं; क्योंकि यज्ञ, दान और तप, ये तीनों ही कर्म बुद्धिमान् पुरुषों को पवित्र करने वाले हैं।

(गीता-18/5)

'मेकिन उरानन स्कालरशिप फंड' की स्थापना परम पूज्य परमहंस स्वामी श्री हरिहर जी महाराज द्वारा 1989 में बैंकाक में निर्धन किंतु प्रतिभाशाली छात्रों को नैतिक एवं आध्यात्मिक शिक्षा में सहायता प्रदान करने हेतु की गई थी। श्रीमती मेकिन उरानन, उनका परिवार, महाराज जी तथा सहेली फाउंडेशन, श्री जयकुमार मीरपुरी, श्री हासाराम एस. तनवानी, कृष्णा एशियन आर्ट्स कं. और अन्य अनेक लोग इस फंड की पूंजी को बढ़ाने के लिए तत्पर रहे हैं।

फंड की व्यवस्था की देखभाल गीता आश्रम थाईलैंड की 'मेकिन उरानन छात्रवृत्ति कमेटी' करती है। उस कमेटी के सदस्य हैं-

Dr. Chirapat Prapanvidya (Silpakorn University), Dr. Samniang Leurmsai (Silpakorn University), Dr. Prapod Assavarirulhakarn (Chulalongkorn University), Miss Vilai Ueranant, Dr. M.C. Agarwal (Former Senior Officer of the United Nations), Mr. Somsakdi Tantiwathin (Former President of Rotary Club of Bangkapi and Former President of India-Thai Chamber of Commerce) and Mr. C. Hotwani (Treasurer, Geeta Ashram, Thailand).

निर्धन और प्रतिभाशाली छात्रों की शिक्षा-प्राप्ति में सहायता करना एक सर्वोत्तम पुण्य कार्य है। शायद इस सहायता के बिना उनके लिए शिक्षा-प्राप्ति अत्यन्त कठिन होती। योग्य छात्र अधिकाधिक संख्या में आर्थिक सहायत प्राप्त कर सकें इस उद्देश्य की सिद्धि के लिए 'मेकिन उरानन स्कालरशिप फंड' दानी महानुभावों से अधिकाधिक दान देने का अनुरोध करता है।